कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

साधना-सुमनावली का द्वितीय सुमन

श्रीः

वैष्णवधर्मप्रश्नोत्तरी

जिसको—

'जय सियाराम जय जय सियाराम' नाम ध्वनि-प्रचारक श्रीवैष्णव-धर्मावलम्बी परमहंस श्री १००८ श्री सियालाल शरणजी महाराज, उपनाम श्री 'प्रेमलता' जू के कृपापात्रशिष्य और 'कल्याणकी साधना' के लेखक—सियारामस्वरूपशरण, उपनाम 'सुहागलता' ने निर्माण किया।

मधुर मधुरमेतन्मङ्गलं मङ्गलानाम्
सकल-निगमवल्ली यत्फलं चित्स्वरूपम्।
सकृदपि परिगीतं श्रद्धया हेलया वा
भृगुवर ! नरमात्रं तारयेद्रामनाम ॥

(भावार्थ भीतर पढ़ें।)

प्रकाशक—

सियारामस्वरूपशरण

प्रथम-संस्करण १००० } श्री रामनवमी, मंगलवार सं० १९९७ वै०

साधना-सुमनावली का द्वितीय-सुमन

श्रीः

वैष्णवधर्मप्रश्नोत्तरी

जिसको—

'जय सिया राम जय जय सिया राम' नाम ध्वनि-प्रचारक श्री वैष्णव-धर्मावलम्बी परमहंस श्री १००८ श्री सिया-लाल शरण जी महाराज, उपनाम श्री 'प्रेमलता' जू के कृपा-पात्र-शिष्य और **'कल्याण की साधना'** के लेखक सियारामस्वरूपशरण, उपनाम 'सुहागलता' ने निर्माण किया।

श्लोक का भावार्थ—

हे भृगुवर ! रामका परममनोहर नाम कितना सुन्दर है !—वह परम मधुर है ! (और भी;) मंगलों में मंगल परममंगल है; सर्व-शास्त्र रूपी वल्ली का वह 'चित्स्वरूप' फल है—ज्ञान रूपी सुफल है; अथवा 'चित्स्वरूप—प्रभु-सारूप्य किंवा सान्निध्य—जिसका फल है, ऐसी सम्पूर्ण-वेद-शास्त्र-रूपी जो 'लता' है; [शास्त्र-वल्ली के श्रवण, मनन और निदिध्यासन-जनित फल से राम-नाम कल्पतरु का फल भिन्न नहीं;—वह भी 'चित्स्वरूप' ही है;] प्रभु का ऐसा वह नाम एक बार भी श्रद्धा से या हेला (खेल) से ही (सही,) उच्चारण किया गया (—गाया गया) सम्पूर्ण प्राणियों को तारने वाला है—वह नर मात्र को तारे !

(—सुभाषित)

जानकी-स्तोत्रम्

गृहे सीता वने सीता,
सीता राम—सहायनी ।
सीताऽयोध्येश्वरी राज्ञी,
सीता याऽऽराधिता मया ॥१॥

सीता स्वयं भूमा देवी,
सीता वै भूमि-नन्दिनी ।
विदेह-तनया सीता,
सीता याऽऽराधिता मया ॥२॥

सीता विश्वस्य माता वै,
सीता गोपी महेन्दिरा ।
सीता रक्षो ऽनला ख्याता,
सीता याऽऽराधिता मया ॥३॥

सीता बाल्मीकि-पुत्री, च
सीता बुद्धि-प्रवर्द्धिनी ।
श्री राम वल्लभा लक्ष्मी,
सीता याऽऽराधिता मया ॥४॥

❀ ❀ ❀ ❀

कुण्डली

जागै आतम हृदय जब, पागै प्रभु पद प्रेम ।
भागै सब-जग-वासना, रटै नाम दृढ़-नेम ॥
रटै नाम दृढ़ नेम छेम तब सब विधि पावै ।
युगल उपासक विमल मिलै गुरु भेद बतावै ॥
दरसै उर सियराम नाम रूप तेहि महँ मन लागै ।
प्रेमलता नर भाव नसै जड़ भवनिशि जागै ॥

× × ×

सद्गुरु महाराज

'जय सियाराम जय जय सियाराम' नाम ध्वनि प्रचारक, बालब्रह्मचारी परमहंस श्री वैष्णव—धर्मावलम्वी श्री १०८ श्री श्री सियालालशरण जू महाराज, उपनाम 'प्रेमलता' जू

जय सिया राम

समर्पण

पूज्यपाद सद्गुरुदेव !

सरकारके श्रीचरणोंके प्रश्रय और प्रसादसे जो कुछ ग्रहण कर सका हूं, उसे सफल करनेके लिए लोकहितकी भावनासे प्रेरित होकर इस 'वैष्णवधर्मप्रश्नोत्तरी' को प्रकाशित कर श्रीमान्‌के कर-कमलोंमें सादर समर्पित करता हूं। गुरुदेव ! इसे स्वीकार कीजिए।

प्रणत—

सियारामस्वरूपशरण

जय सिया राम

आशीर्वात्मक दोहे

विश्नुधर्म प्रश्नोत्तरी, सकल गुननि की खानि।
सज्जन पढ़ि सुनि समुझहीं, हितकर आपन जानि ॥१॥

ग्यान विराग उपासना, भक्ति भावना भेद।
नाना विधि येहि महँ ललित, पढ़त नसै भव खेद ॥२॥

नाम रूप लीलादि की महिमा वेख प्रभाव।
समुझि हृदय धारन करहिं तिन्हि कहं सदा उछाव ॥३॥

सज्जन संत समाज महँ ग्रंथ सुआदर पाय।
श्री सियराम सुनाम की, देइ सु धूम मचाय ॥४॥

येहि कहँ पढ़ि जेहिके सुउर, राम भक्ति कर ग्यान।
भयेउ न तेहि कहँ जानिये, निश्चय पसू समान ॥५॥

वैष्णवधर्मप्रश्नोत्तरी

ग्रन्थकर्ता—

शिवाला, (अलीगढ़) निवासी लाला नत्थीमल आत्मज
रामस्वरूप गुप्त, ओवरसियर;
(गुरुनाम—सियारामस्वरूप शरण)

भूमिका

मैं २८ वर्षोंतक भिन्न-भिन्न देवताओंकी पूजा, कतिपय अनुष्ठान, जप, स्वाध्याय, सत्संग एवं ५ गुरुओंसे उपदेश ग्रहण कर भी शान्ति, निर्भयता किंवा तत्त्व ग्रहणकरनेमें पूर्ण रूपसे अक्षम रहा—सफल न हुआ ; हाँ, ये सभी साधन मेरे पथमें सहायक हुए—इनके द्वारा आगे बढ़नेमें सहायता मिली। फलतः इतने अंशमें सफलता भी हुई, यह निर्विवाद रूपसे कहा जा सकता है। × × × दो वर्षोंतक सतत श्रीसंकटमोचन हनुमानजीके दरबारकी हाजिरी, उनके स्थानपर पाठ सुनाने आदिके नियम करनेके पश्चात् प्रभुकी अनुकम्पासे सद्गुरुकी प्राप्ति हुई—गुरुदेवका परिचय और दर्शन मिला। पहले तो गुरुदेवने १—१।।महीनातक मेरी परीक्षा ली,फिर पात्र समझकर कृपापात्र बनाया और तब पंच संस्कार प्रदानकर शरणागत बनाया; अच्छे अच्छे गूढ़ रहस्योंका उपदेश दिया, प्रभुसे अटल दृढ़ नाता जुड़वाया। × × प्रभु प्रीतिमें बड़ी शान्ति और निर्भयता है। और, तत्व ग्रहणके यही सुफल हैं।

वैष्णव होनेसे अबतक दो वर्षोंके भीतर मैं जो कुछ श्रीगुरुदेव द्वारा ग्रहण कर सका, वैष्णवी ग्रंथोंको पढ़कर, अनुभव कर, समझ सका, उसके अधिकांश पर सारतत्त्वको, साधकों और वैष्णव-धर्ममें प्रवृत्त होनेवाले कल्याणकामी लोगोंकी

हितकी दृष्टिसे अपनी साधना-सुमनावलीके द्वितीय सुमनके रूपमें उपस्थित कर रहा हूँ। मेरे इस द्वितीय सुमनकी सुगन्धसे यदि एक भी सुजनको सौगन्ध्य लाभ हुआ—प्रभु-प्रीति-प्रतीति-पीयूषकी प्राप्ति हुई, तो मैं अपनेको धन्य समझूँगा, यही मेरी आन्तरिक आशंसा है। यों तो न मैं कवि हूँ और न लेखक; निदान, इनकी दिशामें भ्रान्तिका होना असम्भव कहना मिथ्या कथा होगी। त्रुटियोंकी ओर साधु-जनोंका ध्यान नहीं जाता,—वे इसे सुधार ही लेंगे, यह मुझे आशा है।

'संत हंस गुन गहहिं पय, परिहरि वारि विकार'!

विषयोंको तीन अध्यायोंमें विभक्त किया गया है; पहले अध्यायमें सियाराम नाम महाराजकी महिमा, जप प्रकार और नियमादि कहे गये हैं। इस अध्यायके संयोजनका प्रमुख उद्देश्य यही है कि भक्त श्रद्धालु-जन नाम माहात्म्यको जानकर अपने कल्याण मार्गका साधन करें। दूसरे अध्यायमें गुरु-महिमा और वैष्णव धर्मका साङ्गोपाङ्ग वर्णन किया गया है। इसमें साधकोंके लिए संस्कार ग्रहणकी आवश्यकता, फल आदि कहे गये हैं जिससे साधक जन संस्कार-हीन न रहकर शीघ्र ही इस सनातन धर्मका अवलम्बन ग्रहण करें। तीसरे अध्यायमें गुरु महाराज द्वारा उपदिष्ट उत्तम उपदेशोंका संकलन है। इसके लिखनेमें 'बृहदुपासनारहस्य' 'श्री सीताराम नाम प्रकाश' और 'तुलसीकृत रामायण' से सहायता ली गई है।

❀ ❀ ❀ ❀

सांसारिक वस्तुओंके स्वत्वाधिकारी अपनी वस्तुओंपर अपना चिह्न (मोहर) लगाते हैं—अपने परिचयके लिए यतन करते हैं। जो वस्तु किसीकी नहीं होती उसपर किसीका चिह्न नहीं देखा जाता। मनुष्य प्रभुका मुख्य अंश है। उसपर प्रभुकी छाप अवश्य होनी चाहिए तथैव तिलक और कण्ठी भी। इसमें संकोच और भय करना उचित नहीं। हाँ, इनका ग्रहण विधि-पूर्वक होना चाहिए। अतएव योग्य और भजनानन्दी वैष्णवके द्वारा दीक्षा ग्रहणकर प्रभुका बाना पहन सर्वतो भावेन उनका बन जाय, उनके ऊपर अपना योग-क्षेम छोड़ दे। शृंगारभावका भेद-भाव और रहस्य जानकर—समझकर—उस अखिल ब्रह्माण्ड नायक जगन्नियन्ता विश्वपतिकी सेवामें तन्मय हो जाय किंवा आत्म समर्पण कर दे। × × × इसके लिए मुख्य उद्योग या साधन रामनामका जप या कीर्त्तन है। उसमें खूब मन लगाना चाहिए। इसीसे कनक-भवनमें प्रभुसे मधुर मिलन होता है—मनुष्य सफल जीवन होता है! आत्माको चिर शान्ति (तृप्ति) मिलती है।

बस, इसी सदुद्देश्यसे मैंने यह प्रयास किया है। निदान, इसके पढ़नेवाले महानुभाव मननकर वैष्णव बनें, संस्कारोंको धारण करें और इस प्रकार मनमुखीसे गुरुमुखी हों—इतनी ही मेरी सफलता है। × × प्रभुकी साधनामें लगनेवाला 'अमृतफल' पाता है, यह मेरा विश्वास है।

अधिकारी, सन्त, और मनीषि-जनोंसे त्रुटियोंके लिए क्षमा याचना है।

अन्तमें मैं उन लोगोंका सादर आभार मानता हूँ और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकाश करता हूँ जिन्होंने इस साधना-यज्ञमें जिस किसी रूपमें सहायता दी है। मैं मुख्यतः शास्त्राचार्य श्रीराजबलिजी त्रिपाठी 'साहित्यरत्न' का कृतज्ञ हूं, जिन्होंने संशोधन-कार्यमें तन्मयताके साथ योग दिया है। इसी प्रकार श्रीमती कौशल्या देवीका जिन्होंने प्रतिलिपि करने और प्रकाशन व्ययमें सौदार्य सहायता दी है, हृदयसे कृतज्ञ हूँ। शम्!

मंगल, रामनवमी
सं० १९९७ वै०
काशी

—सियारामस्वरूपशरण

हरेर्नामैव नामैव, हरेर्नामैव केवलम्।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव, नास्त्येव गतिरन्यथा॥

——❀:०:❀——

विषय-सूची

पहला अध्याय

दूसरा अध्याय

(वैष्णवधर्म प्रसंग)

पृष्ठ सं०

तीसरा अध्याय

(उपदेशसार)

———

श्री सद्गुरवे नमः । श्री सीतारामनामाभ्यां नमः । श्री हनुमते नमः ।

वैष्णवधर्मप्रश्नोत्तरी

पहला अध्याय

(नाम प्रसंग)

"राम नाम मनि दीप धरु, जीह देहली द्वार ।
'तुलसी' भीतर ,बाहरहू, जो चाहसि उजियार ।।

प्रश्न—नामकी क्या महिमा है ? नाम [जप] से क्या होता है ?

उत्तर—नामकी महिमा अनिर्वचनीय है । नाम ही कल्याण-का कल्पतरु है और 'कल्याणकी साधना' में अत्यन्त उत्तम सहायक है । नामके प्रभावसे कलि-काल-व्याल ग्रसित जीवलोक कल्याणकी ओर बढ़ सकता है, जीवन सफल बना सकता है । नामसे सभी कुछ, जो मिलना चाहिए, जो कल्याण-कर परम मंगल है, मिलता है । कलियुगमें विषम यातनासे उत्पीड़ित जीवके लिए नाम ही आधार और संजीवन है । नामकी महिमा गा-गाकर बड़े-बड़े सिद्ध, सन्त, योगी, तपस्वी और

महात्माओंने कल्याण पथमें सिद्धि पाई है; यतः मुक्त होनेवाले कल्याण पथ-पथिकके लिए नाम 'पाथेय' है।

महात्माओंकी कुछ सूक्तियोंमें नाम महिमाका दिग्दर्शन होता है। देखिए तुलसीदासजी लिखते हैं—

"बन्दउँ राम नाम रघुबर को, हेतु कृसानु भानु हिम कर को।
विधि हरिहर मयवेद प्रान सो, अगुन अनूपम गुन निधान सो।
महामंत्र जेइ जपत महेसू, काशो मुकुति हेतु उपदेसू।
महिमा जासु जान गन राऊ, प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।
जान आदि कवि नाम प्रतापू, भयऊ सुद्ध करि उलटा जापू।
सहस नाम सम सुनि सिव बानी, जपत सदा पिय संग भवानी।
नाम प्रभाव जान सिय नीको, कालकूट फल दीन्ह अमीको।
नाम प्रसाद संभु अविनासी, साजु अमंगल मंगल रासी।
सुक सनकादि सिद्ध मुनि जोगी, नाम प्रसाद ब्रह्म सुख भोगी।
नारद जानेऊ नाम प्रतापू, जगप्रिय हरि हरिहर प्रिय आपू।
नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू, मंगल सिरोमनि भै प्रहलादू।
ध्रुव संग लागि जपऊँ हरिनाऊँ, पायउँ अचल अनूपम ठाऊँ।
सुमिरि पवनसुत पावन नामू, अपने बस करि राखे रामू।
अपतु अजामिल गज गनिकाऊ, भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ।
कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई, राम न सकहिं नाम गुन गाई।"

नामके सम्बन्धमें महात्मा तुलसीदासजीके हृदयके उद्गार ऊपरकी चौपाइयोंमें सार रूपसे प्रकट हैं। विचार करनेपर नाम महिमाके तत्त्व स्पष्ट रूपसे झलक जाएँगे।

अर्जुनसे श्रीकृष्ण भगवान्‌ने कहा है—

रामनामरता जीवा न पतन्ति कदाचन।
इन्द्राद्या संपतन्त्यन्ते तथा चान्येऽधिकारिणः ॥ १ ॥
रामस्मरणमात्रेण प्राणान्मुञ्चन्ति ये नराः।
फलं तेषां न पश्यामि भजामि तांश्च पार्थिव ॥ २ ॥
नामैव जगतां बन्धुः नामैव जगतां प्रभुः।
नामैव जगतां जन्म नामैव सचराचरम् ॥ ३ ॥
नाम्नैव धार्यते विश्वं नाम्नैव पाल्यते जगत्।
नाम्नैव नीयते नामी नाम्नैव भुज्यते फलम् ॥ ४ ॥
नामैवचाङ्गशास्त्राणां तात्पर्य्यार्थवरंमतम्।
नामैव वेद सारांशः सिद्धान्तः सर्वदा शिवः ॥ ५ ॥
नाम्नैव नीयते मेधा परे ब्रह्मणि निश्चला।
नाम्नैव चंचलं चित्तं मनस्तस्मिन् प्रलीयते ॥ ६ ॥
न नाम सदृशं ध्यानम्, न नाम सदृशो जपः।
न नाम सदृशस्त्यागः, न नाम सदृशी गतिः ॥ ७ ॥
न नाम सदृशं तीर्थम्, न नाम सदृशं तपः।
न नाम सदृशं कर्म, न नाम सदृशः शमः ॥ ८ ॥
न नाम सदृशी युक्तिः न नाम सदृशः प्रभुः।
ये गृह्णन्ति सदा नाम तएवजितषड्गुणाः ॥ ९ ॥
श्रीरामस्मरणैनैव नरो यान्ति परांगतिम्।
सत्यं सत्यं सदा सत्यम्, न जाने नामजं फलम् ॥१०॥

अर्थात—'इन्द्र आदि (देव) एवं दूसरे अन्य अधिकारी

अन्तमें गिरते हैं; परन्तु रामनाममें लगे रहनेवाले प्राणी कभी भी पतित नहीं होते। हे पार्थिव! जो मनुष्य राम नामका स्मरण करते हुए प्राणोंको छोड़ते हैं, उनके फलको मैं नहीं देखता हूँ, किन्तु उनकी सेवा करता हूँ—अपनी कृपाका वरदान देता हूँ। ×× नाम ही संसारका बन्धु है, नाम ही विश्वका शासक है—प्रभु है, नाम ही संसारका जन्म है, नाम ही चर और अचर—(चलनेवाले और नहीं चलनेवाले, स्थावर जंगम)—सब कुछ है। नामसे ही विश्वका धारण है, नाम हीसे विश्वका पालन होता है, नामसे ही नामी मिलता है—इष्टदेवकी प्राप्ति होती है, नामके प्रभावसे ही सुन्दर फलका भोग मिलता है—सुख और आनन्द मिलता है।

नाम ही छः अङ्गों (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष) और शास्त्रों* [पूर्व मीमांसा (मीमांसा), उत्तर मीमांसा (वेदान्त), सांख्य, योग, वैशेषिक और न्याय ये छः दर्शन शास्त्र और स्मृति-पुराण, उपपुराण आदि सभी धार्मिक ग्रन्थों) के तात्पर्य (आशय) के लिए श्रेष्ठ माना गया है—सभी शास्त्रोंने नामको प्रधान बताया है। नाम ही वेदोंका सार अंश है—तत्वका निचोड़ है, नाम ही परम मंगल-शिव करनेवाला सिद्धांत है। नाम हीके प्रभावसे परब्रह्म परमात्मामें बुद्धि निश्चल होती

* वेद, उपवेद, शास्त्र, पुराण स्मृति आदिके विशेष और उपादेय परिचयके लिए—लेखककी प्रशस्त सुन्दर उपादेय पुस्तक 'कल्याणकी साधना' पृष्ठ १३२ (परिशिष्ट) देखिए।

है। नामके ही प्रभावसे चंचल चित्त अथवा मन उस परमात्मामें लीन हो जाता है। नामके समान ध्यान नहीं है, नामके समान जप भी नहीं है। नामके सदृश त्याग+ भी नहीं है अर्थात् — त्यागसे भी वह फल नहीं मिलता जो आसानीसे नाम-जपसे मिल जाता है। नामके फलके समान दूसरी कोई अन्य गति भी नहीं है। नामके जपके समान तीर्थ भी नहीं है; नामके जपके सदृश-तप भी नहीं है। नामके समान कर्म नहीं है, नामके सदृश शम नहीं है। नामके सदृश युक्ति भी नहीं है। नामके समान और कुछ भी समर्थ नहीं है। जो लोग नाम ग्रहण (जप) करते हैं वे ही छः गुणों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य) को जीतते हैं।

श्रीरामके स्मरण करनेसे ही मनुष्य परमगतिको प्राप्त हो जाता है; यह बात सत्य है, सत्य है और शाश्वतिक (सदा) सत्य है; नाम जपके फलकी महिमाको मैं भी नहीं जानता हूँ — उसका वर्णन करना मेरे लिए भी कठिन है।

इसी प्रकार वैश्वानर संहितामें आया है —

रामनामात्मकं मन्त्रम्, सततं कीतयेत यः।
सर्वरोगविनिर्मुक्तः, मुक्तिमाप्नोति दुर्लभाम् ॥ १ ॥
म्लेच्छ तुल्याः कुलीनास्ते ये न भक्ता रघूत्तमे।
संकीर्णा यो नयः पूता नाम गृह्णन्ति ये सदा ॥ २ ॥

+ त्यागकी मनोरम तात्त्विक विवेचनके लिए देखिए "कल्याणकी साधना" का 'त्याग और नियम (पृ० ११७) प्रकरण।

नास्ति नास्ति महाभाग ! कलेयुगं समं युगम् ।
स्मरणात्कीर्तनाद्यत्र लभते परमं पदम् ॥ ३ ॥

अर्थात्—'जो लोग रामनामवाले मन्त्र (जय सियाराम जय जय सियाराम ; जय सियाराम जय जय सियाराम इत्यादि) का कीर्त्तन सदा करते हैं, वे सभी सांसारिक रोगों (व्याधियों) से छूटकर अन्तमें दुर्लभ परम पद मोक्षको प्राप्त करते हैं। वे कुलीन (अच्छे कुलमें उत्पन्न भी) जन म्लेच्छ के तुल्य हैं जो भगवान् राममें भक्ति नहीं करते और संकीर्ण योनियाँ (हीन जातियाँ) भी पवित्र हैं, जो सदा नाम जप किया करती हैं। अये महाभाग ! कलियुगके समान दूसरा अन्य युग नहीं है; क्योंकि इस युगमें स्मरण और कीर्त्तनसे ही परम पद प्राप्त हो जाता है।'

वात्स्यायन संहितामें आया है—

स्त्री-राज-बालहा चैव यश्च विश्वासघातकः ।
पापचारी च पापिष्ठो मार्गघ्नो ग्राम-दाहकः ॥

❀ ❀ ❀ ❀

ते चान्ये चैव पापिष्ठा महापाप युताश्च ये ।
सर्वे पापैः प्रमुच्यन्ते राम नाम्नस्तु कीर्त्तनात् ॥

अर्थात्—स्त्री, राजा और बालकको मारनेवाला (ऐसे आदमी कानूनसे भी बड़े अपराधी माने गये हैं) और जो विश्वासघाती है वह, ग्राम दाहक, मार्ग-नाशक, अनेकों पापोंको करनेवाला—ये सभी पापिष्ठ राम नामके कीर्त्तनसे,

सभी पापोंसे, छूट जाते हैं। इस प्रकार और भी अनेकों महा-पापोंसे छुटकारा मिल जाता है—बड़े भारी पापी भी राम नाम के कीर्त्तनसे पापोंसे बच जाते हैं।

हारीत स्मृति में—

इमंमन्त्रमगस्त्यस्तु जप्त्वा रुद्रत्वमाप्तवान्।
ब्र ह्मत्वं काश्यपश्चैव कौशिकोप्यमरेशताम्॥
कार्तिकेयो मनुश्चैव इन्द्रार्कगिरिनारदाः।
बालखिल्यादि मुनयो देवतात्वं प्रपेदिरे॥
अधापिरुद्रः काश्यां वै सर्वेषां त्यक्त जीविनाम्।
दिशत्येतन्महामन्त्रं तारकं ब्रह्मनामकम्॥
यस्यश्रवण मात्रेण सर्व एवदिवंगताः।
प्रजप्तव्यं सदा प्रेम्णा तन्मन्त्रं रामनामकम्॥

अर्थात्—इसी मन्त्रको जप कर अगस्त्यजीने द्ररुत्वको प्राप्त किया; काश्यपने ब्रह्मत्वको प्राप्त किया और कौशिक (विश्वामित्र) ने देवताओंकी शासकता प्राप्त की। स्वामी कार्तिकेय, मनु, इन्द्र, अर्क (सूर्य) गिरि, नारद और बाल-खिल्य आदि मुनियोंने भी नामके प्रभावसे ही देवत्वको प्राप्त किया। आज भी श्री शंकरजी काशीमें मरनेकी इच्छा रखने-वाले प्राणियोंको इस 'तारक' 'राम नाम' ब्रह्म नामक महा-मन्त्रका उपदेश देते हैं; जिसके श्रवण मात्रसे सभी स्वर्गको प्राप्त करते हैं! अतः सदा प्रेमपूर्वक उस परम मन्त्र रामनाम-का जप करना चाहिए—रामनामका जप प्रेम और नियमसे करना चाहिए।

सिद्धान्त रहस्यमें श्री नारदजीका वचन है—

श्री राम ! राम ! रघुवंश कुलावतंस !

त्वन्नाम कीर्तनपरा भवतिह वाणी ;

नान्यंवरं रघुपते भ्रमतोऽपियाचे;

सत्यं वदामि रघुवीर दयानिधेऽहम् ॥'

❀ ❀ ❀ ❀

अहो चित्र महो चित्रम् अहोचित्रमिदं द्विजाः ।

राम नाम परित्यज्य संसारे रुच्युत्तमा ॥

अर्थात्—हे श्रीराम,—हे रामभद्र ! हे रघुवंशके अवतंस ! आपके नामके कीर्त्तनमें हमारी वाणी तत्पर हो जाय। दूसरा वर हे रघुपते भ्रमसे भी नहीं याचता। हे दयानिधान रघुवीर ! मैं सत्य कहता हूँ—मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मैं आपका कीर्त्तन करूँ—यही माँगता हूँ। यह बात सच है।

हे द्विजो ! यह बड़ा ही विचित्र है—कितना विचित्र है !—राम नामको छोड़कर संसारमें (संसारके आपात रमणीय विषयोंमें) उत्तम रुचि देखी जाती है—यह कम विचित्र है !

भगवान्का नाम अमृतका पूर्ण घट है, आनन्दकी राशि है। श्रान्तिसे थके जीवके लिये ठण्ढी छाया और शीतल वायु है। फिर भी मानव दहकती आगके समान दुनियाकी ओर ही पैर बढ़ाता है—यह एक विचित्र बात है। यह बात तो ऐसी है जिससे परिचित भक्त आत्मा चिल्लाकर कहती है—

'सुधा-समुद्र समीप बिहाई, मृग जल पेखि मरहु कत धाई।'

परन्तु वासनाके अन्त नहीं होनेसे प्रभु प्रीति बढ़ती नहीं। प्रभुप्रीति नाम जपसे होनी है, सो भी नहीं है। हो तो कैसे? इसीलिए सन्त हृदयका उद्गार होता है—

'भजहु राम सब काम बिहाई।'

❀ ❀ ❀ ❀

अच्छा तो और भी कुछ वचन नाम महिमामें मिलते हैं; उनका भी श्रवण होता चलना चाहिए। नाम-जपकी महिमा भी नाम-जपके लिए आवश्यक अंग है।

प्रभासपुराणमें कहा है--

मधुरालयमद्यामुख्यं नाम सर्वेश्वरेश्वरम्।
रसनायां स्फुरत्याशु महारासरसालयम्॥

अर्थात् [श्रीरामनाम] यह नाम मधुरिमाका घर है, सभी ईश्वरोंका ईश्वर है, अतएव प्रधान है। यह जीभके ऊपर उच्चरित होता हुआ उसे महारासका रसालय बना देता है—जीभमें बड़े मधुर स्वादका (मानों) गृह बन जाता है—(ऐसा है परममनोहर श्रीरामनाम—सियाराम नाम)!

श्रीमद्भगवान्का वाक्य नारदके प्रति—

"श्रीरामनामपरमं प्राणात्प्रियतरं मम।
नहितस्म्यादितःयः कश्चित सत्यं जानीहिनारद!"

अर्थात्—हे नारद! 'रामनाम' मुझे परम-प्रिय है—प्राणोंसे भी प्रियतर है। उससे बढ़कर न तो कोई 'हित' ही है और न प्रिय ही। यह मैं सत्य कहता हूँ—इसे तुम सत्य जानो।

कालिका-पुराणमें देवीका वचन है—

"रामेत्यपि हितेदेवे परात्मनि निरामये।
असंख्यमखतीर्थानां फलंतेषां भवेद्ध्रुवम् ॥

रामनाम-प्रभा दिव्या सर्वत्रेदान्तपारगाः।
वदन्ति नियतं राजन् ज्ञात्वा सर्वोत्तमोत्तमम्॥"

भावार्थ—सबके हित निरामय भगवान् परमात्माके विषयमें 'राम' यह मन्त्र जापकको असंख्य यज्ञ और तीर्थोंका फल देता है; यह ध्रुव है—अटल है। रामनामकी कान्ति दिव्य है, सभी वेदान्तके पारगामियोंने (रामनामको) ही उत्तम जाना है और जानकर उत्तम कहते हैं।

देवी भागवतमें श्री व्यासजीका शुकदेवके प्रति कथन है—

"रामेति सततं नाम पीयेत सुन्दराक्षरम्।
रामनाम परं ब्रह्म सर्वं वेदादिकं महत् ॥ १ ॥
विष्णोर्नामसहस्राणि पठनाद्यल्लभते फलम्।
तत्फलं लभते मर्त्यो रामनाम स्मरन् सकृत् ॥ २ ॥"

अर्थात्—'राम' इस सुन्दर अक्षरवाले नामको सदा पीते रहना चाहिए। रामनाम ही परम ब्रह्म है और सब कुछ वेदादि महान् समूह भी वही है। विष्णुके हजार नामके पढ़नेसे मनुष्यको जो लाभ मिलता है, वह सब फल रामनामके एक-उच्चारण करनेसे ही मिल जाता है—

नन्दी पुराणमें नन्दीश्वरने गणोंसे कहा है—

सर्वदा सर्वकालेषु ये च कुर्वन्ति पातकम्।
रामनाम जपं कृत्वा यान्ति धाम सनातनम् ॥ १ ॥

शृणुध्वं भो गणास्सर्वें रामनाम परं बलम्।
यत्प्रसादान्महादेवो हलाहलमयीं पीबेत्॥ २॥
जानाति रामनाम्नस्तु परत्वं गिरिजापतिः।
ततोन्यो न हि जानाति सत्यं सत्यं वचो मम॥ ३॥

भावार्थ—और जो लोग सदा पाप वासनामें ही लगे रहते हैं, वे भी राम नामको जपकर परम सनातन धामको प्राप्त कर लेते हैं—जो सदाचारी सन्त हैं उनकी तो बात ही क्या? ×× हे गण! आप सभी सुनें—राम नाम ही परम बल है; क्योंकि उसीके प्रसादसे शिवजीने हालाहलको पी लिया। राम नामके परत्व (उत्तमता) को पार्वतीपति ही जानते हैं; उनसे अन्य दूसरा नहीं जानता—यह मेरा वचन सत्य है, सत्य है।

पद्म पुराणमें शिवजीने स्वयम् पार्वतीजीसे कहा है—

श्री राम रामेति रामेति, रमे रामे मनोरमे!
सहस्रनाम तत्तुल्यम्, रामनाम वरानने।

भाव यह है कि हे मनोरमे पार्वति! 'श्रीराम' 'श्रीराम' 'श्रीराम' इस प्रकार नामका उच्चारण करता हुआ मैं श्रीराममें रमा करता हूँ; हे वरानने! सहस्र नामकी बराबरी यह रामनाम करता है—रामनामकी महिमा अकथनीय है।

ब्रह्मवाक्य नारदजीके प्रति--

मानुषं दुर्लभं प्राप्य सुरैरपि समर्चितम्।
जप्तव्यं सावधानेन रामनामाखिलेष्टदम्॥

अर्थात्—दुर्लभ मनुष्य शरीरको (जिसे देवता भी अच्छो

तरह मानते हैं) प्राप्तकर देवताओंसे भी पूजित सम्पूर्ण मनोरथोंको देनेवाला रामनाम सावधानीसे जपना चाहिए।

श्री सनत्कुमारने इसीलिए यह कहा है कि—

अपराधविनिर्मुक्तः फलं नाम्नि समाचार।
नाम्नैव तव देवर्षे! सर्वं सेत्स्यतिनान्यतः॥

अर्थात्—हे देवर्षि नारदजी! अपराधोंसे अलग होकर नाममें ही फलकी इच्छा कीजिए; नामसे ही आपका सभी कुछ सिद्ध होगा; दूसरे उपायसे नहीं।

वसिष्ठजीका वचन है—(भरद्वाजसे)

अहो महामुने! लोके रामनामाभयप्रदम्।
निर्मलं निर्गुणं नित्य निर्विकारं सुधास्पदम्॥

अर्थात—अये महामुने! रामनाम लोकमें अभय देता है; वह निर्मल है, निर्गुण और निर्विकार है, अतएव नित्य एवम् अमृतका स्थान है।

ब्रह्माण्ड पुराणमें, श्रीरामचन्द्रजीसे, धर्मराज कहते हैं—

त्वन्नाम संकीर्तन तो निशाचरा द्रवन्ति भूतान्यपयान्ति चारयः।
नाशं तथा सम्प्रति यान्ति राजन् तनः परं धाम प्रयान्ति साक्षात्॥

अर्थात्—हे राजन्! आपके नामके कीर्त्तनसे निशाचर भाग जाते हैं, दूसरे प्राणी भी दूर हट जाते हैं, शत्रु नष्ट हो जाते हैं आज भी भक्तजन! साक्षात् परंधामको प्राप्त कर रहे हैं।

सीतया सहितं राम-नाम जाप्यं प्रयत्नतः।
इदमेव वरं प्रेम-कारणं संशयं विना॥ १॥

सकृदुच्चारणादेव मुक्तिमायातिनिश्चितम्।
न जानेऽहं शतादीनां फलं वेदैरगोचरम्॥ २॥ (शिवपुराण)

अर्थात्—'सीता' के सहित 'राम' नाम सदा तत्पर होकर जपना चाहिए। हे प्रिये! यही श्रेष्ठ प्रेमका कारण है, इसमें संशय नहीं। × × एक बारके उच्चारणसे भी मनुष्य मुक्तिको प्राप्तकर लेता है, यह निश्चित है। मैं नहीं जानता कि सैकड़ों और अन्य कर्मोंका फल, उसमें वेदोंसे अगोचर भी उसके बराबर है।

श्री मार्कण्डेयपुराणमें आया है—

'वेदानां सार-सिद्धान्तं सर्व सौख्यैककारणम्।
रामनाम परं ब्रह्म सर्वेषां प्रेमदायकम्॥

अर्थात्—वेदोंका तत्त्वसिद्धान्तवाला, सभी सुखोंका एक-मात्र कारण यह 'रामनाम' परब्रह्म ही है; यही उस परब्रह्ममें प्रेम कराता है।

गरुणपुराणमें स्वयम् विष्णु भगवानका अमोघ वाक्य मिलता है—

"श्रीराम राम रामेति ये वदन्त्यपि पार्थिव।
पापकोटि-सहस्रेभ्य स्तेषां संतरणं ध्रुवम्॥"

अर्थात्—हे पार्थिव! जो श्रीराम नामका उच्चारण करते हैं, वे करोड़ों पापोंसे छूट जाते हैं, इतना निश्चित है—राम नामकी महिमाका वर्णन कौन कर सकता है।

गोप्याद्गोप्यतमं भद्रे! सर्वस्वं जीवनं मम।
श्रीरामनाम सर्वेषा मदभुतं भुक्ति मुक्तिदम्॥

जपस्व सततं रामनाम सर्वेश्वर प्रियम् ।
नियामकानां सर्वेषां कारणं प्रेरकं परम् ॥ (कूर्म पुराण)

अर्थात्—हे भद्रे ! गोप्यसे भी गोप्यतम, मेरा सर्वस्व जीवन और सभी प्राणियोंके लिए भुक्ति और मुक्ति देनेवाला श्रीराम-नाम है; सर्वेश्वर श्रीके प्रिय श्रीराम-नामका सदा जप करो, वह सभी नियामकोंका प्रेरक परम कारण है।

वाराहपुराणमें आता है—

ध्येयंनित्यमनन्यप्रेमरसिकैः, पेयं तथा सादरम् ।
ज्ञेयं ज्ञानरतात्मवद्भिः सुजनैः सम्यक् क्रियाशान्तये ॥
श्रीमद्राम-परेशनामशुभगं सर्वाधिपं शर्मदम् ।
सर्वेषां सुहृदं सुरासुरनुतं ह्यानंदकन्दंपरम् ॥

भावार्थ— अनन्य प्रेमरसिकोंको चाहिए कि श्रीरामनामका नित्य ध्यान किया करें, सादर उस नामका रसपान किया करें। इसी प्रकार ज्ञानीको भी, जो आत्म साक्षात् कर लेते हैं और जो अच्छे जन होते हैं, (उन्हें भी) अच्छी तरहसे कर्म बन्धनको ढीला करनेके लिए श्रीरामनाम जानना चाहिए। श्रीमद्-रामचन्द्रका -जो सबसे बड़े मालिक हैं, नाम सभी नामोंका राजा, सुखदायी और सुभग है। वह सभीका सुहृद् है और सुर-असुरसे नम्य है, आनन्दकन्द है, सबसे सब विधि श्रेष्ठ है।

अग्निपुराणका वचन है—

अग्निष्टोमादि कर्माणि सापायानि कलौयुगे ।
गङ्गास्नानं हरेर्नाम निरपायमिदं द्वयम् ॥

अर्थात्—(इस) कलि युगमें अग्निष्टोम आदि सभी कर्म विघ्नसे युक्त हैं; (केवल) गंगा स्नान और श्री हरिका नाम—ये ही दो विघ्नसे रहित हैं; इसलिए भी भगवन्नामका जप सतत करना चाहिए।

ब्रह्मपुराणमें—

द्विजोवा राक्षसोवापि पापी वा धार्मिकोऽपि वा।
राम रामेति यो वक्ति स मुक्तो भवबन्धनात् ॥११॥

राम रामेति रामेति ये वदन्ति दिवानिशम्।
तेषां भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः॥

अर्थात्—ब्राह्मण (द्विज) हो अथवा राक्षस, पापी हो अथवा धार्मिक, जो 'श्रीराम' कहता है, वह संसारके बंधनसे मुक्त ही है—मुक्त हो ही जाता है।

'राम' 'राम' 'राम' (जयसियाराम, जय जय सियाराममें तात्पर्य है) इस प्रकार जो लोग दिन रात रटते हैं, उनकी भुक्ति और मुक्ति—दोनों होती हैं—इसमें संशय नहीं।

श्रीरामनाम·सामर्थ्यं वैभवं शौर्य विक्रमम्।
न वक्तुं कोपि शक्नोति सत्यं सत्यं च नारद। (वायुपुराण)

अर्थात्—हे नारद! श्रीरामनामकी सामर्थ्य, वैभव, शूरता और पराक्रमको कोई भी नहीं कह सकता—(भाव यह कि श्रीराम नामकी शक्ति बहुत बड़ी है, इससे सभी कुछ हो सकता है—नामकी वर्णना कौन कर सकता है?) यह बात बिलकुल सत्य है, सत्य है।

नृसिंह पुराणमें प्रह्लादने भी डंकेकी चोट कहा है—

"रामनाम जपतां कुतो भयम्, सर्वतापशमनैकभेषजम्।
पश्य तात! मम गात्रसङ्गतः पावकोपि सलिलायतेऽधुना॥
रामनामप्रभावेण मुच्यते सर्वबन्धनात्।
तस्मा त्त्वमपि दैत्येश! तस्यैव शरणं व्रज॥"

अर्थात्—हे तात! त्रिविध (दैहिक, दैविक और भौतिक) तापोंको शान्त करनेवाले एक औषध श्रीराम नामको जपनेवालेको किससे कैसे भय?—देखो न! मेरी देहसे लगती हुई भी आग इस समय पानीके समान शीतल मालूम पड़ रही है। ++ रामनामके प्रभावसे जन सभी बन्धनोंसे छूट जाते हैं; इसलिए तुम भी हे दैत्येश! उसीकी शरण जाओ!

भगवन्नामकी महिमा वृहद्विष्णु-पुराणमें भी आई है वहाँके भी दो श्लोक श्रवणीय हैं—

"सर्व रोगोपशमनं सर्वोपद्रव-नाशनम्।
सर्वारिष्ट हरं क्षिप्रं राम-नामानुकीर्तनम्।"

"नास्ति श्रीरामनाम्नस्तु परत्वं दृश्यते क्वचित्।
सदृशं त्रिषु लोकेषु-सर्वतन्त्रेषु कुत्रचित्॥"

अर्थात्—सभी रोगोंको शान्त करनेवाला, सभी उपद्रवोंका नाश मरनेवाला एव शीघ्र ही सभी अरिष्टोंको हरनेवाला श्रीराम-नामका कीर्तन है। श्रीरामनामके कीर्तनके—ये सब भी फल हैं श्रीरामनामसे बढ़कर परत्व—श्रेष्ठत्व कहीं पर भी नहीं दीखता; यही क्यों?—उसके समान भी तीनों लोकोंमें और

सभी शास्त्रोंमें कहींपर भी नहीं मिलता। रामनाम सबसे श्रेष्ठ और अद्वितीय है।+ +हनुमन्नाटकमें एक सुन्दर श्लोक है—

कल्याणानां निधानं कलिमलमथनं पावनं पावनानाम्;
पाथेयं यन्मुमुक्षोः सपदि परपद-प्राप्तये प्रस्थितस्य।
विश्रामस्थानमेकं कविवरवचसां जीवनं सज्जनानाम्;
बीजं धर्मद्रुमस्य प्रभवतु भवतां भूतये रामनाम॥

[प्रभुका अनुपम नाम अत्यन्त महिमाशाली है। उसका वर्णन साधारण बुद्धिसे सम्भव नहीं है, फिर भी कविजन कुछ न कुछ कहते ही हैं। इस श्लोकमें भी कविने गंभीर भावोंको भरनेकी चेष्टा की है। भक्तजन पढ़ें, मनन करें।]

भावार्थ यह है—जो सभी मंगलोंका स्थान है, कलिकालके पापोंको दूर कर देनेवाला है और पवित्र करनेवालोंको भी पवित्र करनेवाला (पावनोंका पावन) है, जो परमधामको शीघ्र पानेके लिये प्रस्थित मुमुक्षु (मोक्षकी इच्छावाले) जनोंका पाथेय (कलेवा) अर्थात् साधन है, जो श्रेष्ठ कवियों की वाणियोंका एकमात्र विश्राम-स्थान है एवं जो सज्जनोंके प्राण ही हैं, ऐसा धर्म-तरुका बीज-स्वरूप रामनाम आप (सभी) लोगोंके लिए मंगलको देनेवाला हो!

भगवन्नामकी महिमा वर्णनातीत है। थोड़ेमें यही कहा जा सकता है कि—

न नामसदृशं ज्ञानं न नामसदृशंव्रतम्।
न नामसदृशं ध्यानं न नामसदृशं फलम्॥

न नामसदृशस्त्यागो न नामसदृशः शमः।
न नामसदृशं पुण्यं न नाम सदृशी गतिः॥

नामैव परमा मुक्तिः नामैव परमा गतिः।
नामैव परमा शान्तिः नामैव परमा स्थितिः॥

नामैव परमा भक्तिः नामैव परमा मतिः।
नामैव परमा प्रीतिः नामैव परमा स्मृतिः॥

नामैव कारणं जन्तोः नामैव प्रभुरेवच।
नामैव परमाराध्यो नामैव परमोगुरुः॥

❀ ❀ ❀ ❀

इस प्रकार प्रभुके अनेकों—कोटि कोटि नाम हैं और सभी एकसे बढ़कर एक हैं। किसीके भी (मनोयोग द्वारा) जपसे सिद्धि मिल सकती है। परन्तु रामनामकी महिमा कुछ अनूठी ही है। रामनामकी महिमा सभी गाते हैं—गाते नहीं-अघाते। हाँ, उसका वर्णन करना साधारण काम नहीं है। इसीलिए सन्तोंकी सूक्तियोंकी ओर ध्यान करा देना ही लेखकका निवेदन हो जाता है। अतः आइये श्री प्रेमलता जू के कुछ मीठे वचन भी इस प्रसंगमें सुनते चलें।—

बृहदुपासना रहस्यमें श्री 'प्रेमलता जू' का वचन—

प्रभु के सुन्दर नाम अपारा, अधिक एकते एक उदारा।
प्रकटे जगत करन कल्याना, प्रभु के कर्म गुणनि ते नाना॥
सब नामनि में राम सुनामा, सब विधि बड़े सकल गुण धामा।
जितने नाम रूप प्रभु केरे, राम नाम ते होहिं घनेरे।

सब नामनि बिच तेज प्रभावा, लखहु राम नामहिं कर छावा।
सात्त करोर मंत्र श्रुति गाये, सर्व-सिद्धि नामहिं रटि पाये।
देखत छोट प्रताप सुभारी, राम नाम कर जान पुरारी।
अगनित नाम रूप प्रभु केरे, सब 'सियराम' नाम के चेरे।
सत् चित् आनंद रूप अनूपा, राम सुनाम हरणभवधूपा।
सकल मंत्र नामनि के माहीं, शक्ति सुरामनाम सम नाहीं।
अपर नाम उमराँव वजीरा, राम नाम नृप न्यायी धीरा।
अपर नाम उडुगन सुखकन्दा, राम नाम पूनम के चन्दा।
अपर नाम मुक्तामणि नाना, राम नाम चिन्तामणि प्राना।
अपर नाम सब सुभग बराती, राम नाम दूलह अघ-घाती।
अपर नाम सब द्विज बुधिवन्ता, राम नाम जग त्यागी सन्ता।

अपर नाम सब विबुध गण, राम नाम सुर राज।
जापक उर अमरावती, राजत सहित समाज॥

कोटिन माघ प्रयाग न्हाई, राम नाम बारक रटु भाई।
कोटिन व्रत एकादशि कीजै, राम नाम मुख बारक लीजै।
कोटिन विप्र सुन्यौति जिमावै, राम नाम बारक मुख गावै।
कोटिन भांति देइ बहु दाना, राम नाम बारक न समाना।
कोटिन बिधि गायत्री जापै, राम नाम इक बार अलापै।

कोटिन सर वापी कुआं, खनै लगावै बाग।
राम नाम के सम नहीं, रटु तेहि सह अनुराग॥
कोटिन साधन साधिये, कोटिन जन्म सुधारि।
राम नाम कीरण सम, सुखद न कहत पुरारि॥

विद्यारथी रटै जो नामहिं, पावहिं विद्या बिनु श्रम सामहिं।
धन हित रटन करत जो कोई, मिलै विपुल कहुँ घटै न सोई।
उभय लोक मँह जो चह जीती, रटै रटावै नाम सप्रीती।

❀ ❀ ❀ ❀

रोगी जो चह रोग नशावन, रटै नाम लय लाभ सुपावन।
रुजगारी रुजगार में, लाभ चहहिं जो कोय।
रटै रटावै नाम नित, कबहुँ न हानी होय॥
राज भवन जंगल जल माहीं, प्रविसहु नाम रटत भय नाहीं।
कालहुँ की गति नाहिन तहवाँ, होत उच्चारन नाम सुजहवाँ।
जो ग्रह ग्राम परै बीमारी, हैजा प्लेग बुखार तिजारी।
जय सियाराम नाम धुनि कीजै. सुनि सियराम नाम धुनि भाजै।
हनुमन्तहि जो चहहु रिझाई, तौ रटि नाम सुनावहु भाई।
सब बिधि कुशल चहहु सब ठामा, रटहु सदा सियराम सुनामा।

❀ ❀ ❀ ❀

जप तप जोग सुविराग सुदाना, पूजन पाठ होय व्रत ध्याना।
अनुष्ठान सिधि होयँ सब, आदि सुषष्ट प्रयोग।
रटै नाम हनुमान ढिग, बैठि सुतजि तियभोग॥

❀ ❀ ❀ ❀

'कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई, राम न सकहिं नाम गुन गाई।'

मनुष्य मंगल—परम मंगल चाहता है। वह अपनी बद्ध-सीमासे निकलकर असीमके प्रशस्त क्षेत्रमें विचरना चाहता है। उसे बंधनकी यातना अखरती है, वह अन्धकारके भीतर

अप्रकाशित रहना पसन्द नहीं करता। वह चाहता है कि प्यारे प्रभुका—युगल सरकारका सहारा मिले और वह इस संकुचित (सांकरी) गलीसे निकलकर राज-पथसे उस मंगल धामतक पहुँच जाय। वह सोचता है, राजपथमें प्रकाश है, अवकाश है। शास्त्र और सन्त भी आश्वासन देते हैं; वे कहते हैं—कल्याण पथके पथिको! आओ, बढ़ो—बढ़ते चलो। मंगल मन्दिरका राजपथ यही है–मंगल मार्ग यही है। इधर प्रकाश है—अन्धकार नहीं, सुख है, दुखका तो नाम ही नहीं। इधर मस्ती है, आनन्द है, गाना और कीर्त्तन है। जंगम साधु-संगम तीर्थ-राज है। पाथेय भी पूरा है। पथ तो प्रशस्त है ही।

प्रभु परम मंगल हैं, उनका नाम मंगल-मार्ग है। इस पथमें प्रकाश (भीतर और बाहर दोनों ओर) फैला रहता है। इसमें आनन्द ही आनन्द रहता है। कठिनाईका तो नाम ही नहीं। इसीलिए न इसे 'दुर्गपथः' नहीं, प्रत्युत प्रशस्त राजपथ कहा गया है। भक्ति-मार्गमें नाम-जप राज-पथका प्रकाश है। अतएव भक्त लोगोंकी चेतावनी है—

'राम नाम मनि-दीप धरु, जीह देहरी द्वार।
तुलसी भीतर बाहरहु, जो चाहसि उजियार॥'

मंगल-मन्दिरमें जानेके लिए प्रकाशक रामनामकी भाँति उस परम मंगलकी आराधनामें भी उस परम पवित्र रामनाम-की दीपबत्ती आवश्यक होती है। इसीलिए परम-पावन राम नाम साधनाकी भूमिका और साधनाके क्षेत्रमें बराबर उपयोगी

होता है। सच तो यह है कि भक्तोंके लिए— प्यारे प्रभुके प्रेमी-जनोंके लिए वह नाम 'कल्पतरु' है। उसकी 'ज्योति' मंगल मार्ग-से मंगल मन्दिर तक स्वच्छ, निर्मल, अविच्छिन्न रूपसे जग-मगाया करती है। उसकी धारा टूटती नहीं। यही कारण है कि उस प्रकाशके सहारे चलनेवाले उस राजपथके पथिकके लिये वह प्रकाश ही परम मंगल मन्दिर और परम मंगल मन्दिरका देवता हो जाता है—नाम और नामी एक हो जाता है। पथिकका (भक्तिके मार्गमें चलनेवाले बटोही का) पाथेय पूरा रहता है, पर पंथ समाप्त हो जाता है। वहाँ पहुँचकर वह विश्राम—आराम—करता है और मस्तीमें गाता-बजाता—कीर्तन करता है। उस प्यारे प्रभुके धाममें वह सदा विहार करता है—'पत्रं पुष्पं फलं तोयम्' से उनकी अर्चा करता है। वह धूप-दीप आरती उतारता है—निश्चल होकर उस परम मधुर मूर्ति युगल सरकारकी आराधना करता है। उसकी आराधनाकी धारा समाप्त नहीं होती; एवम् उसे श्रान्त भी नहीं होना पड़ता। वह 'नित्य-विधि' का पालन करता है—किसी कामनाके लिए कुछ भी नहीं करता। उसे वहाँसे लौटना नहीं है, उससे ऊपर जाना नहीं है—यतः उससे परे और कोई 'धाम' ही नहीं। वह तो प्रभुका परम-धाम है। उसीकी सूचना भगवान्‌ने गीतामें स्वयम् दी है—

... ...

"यं प्राप्य न निवर्त्तन्ते तद्धाम परमं मम" (गीता ८।२१)

शास्त्रोंमें यह विवेचन बड़ी खूबीके साथ किया गया है कि नाम और नामीका अभेद है। नामसे नामीकी प्राप्ति होती है और नामीकी प्राप्ति होनेपर भी नाम नहीं छूटता—'न सोस्ति-प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते'। साथ ही यह भी विचारा गया है कि और उपायोंसे बढ़कर नाम-जप क्यों प्रधान माना गया है। सबका सारभूत सिद्धान्त ऊपर बताया गया है। भगवान्‌के भक्तोंको नाम जप अविच्छिन्न रूपसे सदा करना चाहिए। इस कलिकालमें और साधन एवम् उपाय दुष्कर हैं—

नाम एक कलिकाल अधारा!

गोस्वामी तुलसीदासने एक ही पदमें इस नाम-महिमाके सारको सुन्दर अक्षरोंमें अंकित कर दिया है। इसका प्रत्येक पद भाव भरा हुआ विचारणीय है।

नाहिन आवत आन भरोसो।
यह कलिकाल सकल साधन तरु, है स्रम-फलनि फरोसो ॥१॥
तप, तीरथ, उपवास, दान, मख, जेहि जो रुचै करोसो।
पायेहि पै जानिबो करम-फल भरि-भरि वेद परोसो ॥२॥
आगम-बिधि जप-जाग करत नर सरत न काज खरोसो।
सुख सपनेहु न जोग-सिधि साधन, रोग वियोग धरोसो ॥३॥
काम, क्रोध, मद, लोभ मोह मिलि ग्यान विराग हरोसो।
बिगरत मन संन्यास लेत जब नावत आम घरोसो ॥४॥
बहुमत मुनि बहुपंथ पुराननि जहाँ-तहाँ झगरो सो।
गुरु कह्यो राम-भजन नीको मोहिं लगत राज-डगरो सो ॥५॥
तुलसी बिनु परतीति प्रीति फिरि फिरि पचि मरै मरोसो।
राम नाम-बोहित भव-सागर चाहै तरन तरो सो ॥६॥

❀ ❀ ❀ ❀

नामकी महिमा अनिर्वचनीय है!

प्रश्न—नाम बड़ा या भगवान् ?

उत्तर—प्रश्न बड़ा उपादेय, पर गंभीर है। नाम और नामीका बड़े छोटेका प्रश्न ही अलौकिक है। अधिकारी इस तथ्य रहस्यको समझ सकता है—अन्य नहीं। यहाँ बुद्धिवादका प्रभाव काम नहीं करता। यहाँ तो सन्तों और शास्त्रोंके वचनोंपर अटूट श्रद्धा और विश्वाससे अमृतका पूर्ण घट प्राप्त होता है—मंगल घटका दर्शन होता है। आखिर 'घट' में अमृतका भर जाना—भक्तके हृदयमें भगवानका बस जाना ही क्या कम है! परन्तु क्या भगवान्के नाम ग्रहणके बिना यह कभी सम्भव है? नहीं, तो इसीलिए नाम पहले फिर नामी। और, जो पहले वह बड़ा। हाँ, यह स्मरण अवश्य रहना चाहिये कि दोनोंका एक साथ एकी-भाव अविच्छेद्य होता है—एक दूसरेसे भिन्न नहीं हो सकता। अच्छा, तो आइए सन्तों और शास्त्रोंके स्वाध्यायकी ओर ध्यान दिया जाय।

भक्तवर गोस्वामी तुलसीदासजीने इस प्रसंगका मनोरम वर्णन किया है और वह वर्णन सचमुच बड़ा सुन्दर है। सुनिए—

अगुन सगुन दुई ब्रह्म सरूपा, अकथ अगाध अनादि अनूपा।
मोरे मत बड़ नाम दुहूते, किये जेहि जुग बस निज बूते।
व्यापकु एक ब्रह्म अविनासी, सत चेतन घन आनँदरासी।
अस प्रभु हृदय अछत अधिकारी, सकल जीव जगदीन दुखारी।
नाम निरूपन नाम जतन तें, सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तें।

निर्गुन ते एहि भाँति बड़, नाम प्रभाउ अपार।
'कहउ नामु बड़ राम ते', निज बिचार अनुसार॥

राम भगत हित नर तनुधारी, सहि संकट किये साधु सुखारी।
नाम सप्रेम जपत अनयासा, भगत होंहि मुद मंगल बासा।
राम एक तापस तिय तारी, नाम कोटि खल कुमति सुधारी।
भंजेउ राम आपु भव चापू, भव-भय भंजन नाम प्रतापू।
दंडकवन प्रभु कीन्हि सुहावन, जन पर अमित नाम किय पावन।
निसिचर निकर दले रघुनंदन, नामु सकल कलि कलुष निकंदन।
राम सुकंठ बिभीषन दोऊ, राखेउ सरन जान सब कोऊ।
नाम गरीब अनेक निवाजे, लोक वेद बर बिरिद बिराजे।
राम भालु कपि कटकु बटोरा, सेतु हेतु श्रम कीन्ह न थोरा।
नाम लेन भव सिंधु सुखाहीं, करहु बिचार सुजन मनमाहीं।

ब्रह्म राम ते नाम बड़, बरदायक बरदानि।
राम चरित सत कोटि में, लिये महेस जियँजानि॥

❋ ❋ ❋ ❋

इससे स्पष्ट हो गया कि नाम महाराज प्रभु (राम) से बहुत बड़े हैं—उनका प्रभाव बड़ा और महिमा अतुलनीय है। इसका फल क्या है, यह तो बहुत कुछ कहा भी गया है। और सच तो यह है कि नाम महिमाके विषयमें कहा ही नहीं जा सकता। फिर भी बड़ोंके वचनोंका आधार श्रेयस्कर होता ही है। इसलिए उनकी एक दो बातें कहनी सुननी तो चाहिए ही!

श्री भगवान्‌ने स्वयम् श्री शंकरजी महाराजसे कहा है—

सकल नाम मम अधम उधारन, राम नाम पै सबके कारन।
इष्टदेव मम नाम सुनामा, महिमा अकथ अनूप ललामा।
राम नाम मम प्राण अधारा, इन्हिके बल नाशैं महि भारा।
जपौं सदा मैं राम सुनामू, तिन्हि सम प्रिय मोहि देह न धामू॥
राम-नाम आधीन सदा हीं, रहउँ यथा तन करि परिछाहीं।
राम नाम सुमरहिं प्रति स्वासा, बसौं सदा मैं तिन्हिके पासा॥
कामिहिं प्रिय जिमि सुन्दर नारी, राम-नाम तिमि मोहि पुरारी।
राम-नाम के वश मैं रहहूँ, सत्य वचन शिव तुम्हते कहहूँ।
राम-नाम आज्ञा अनुसारी, सकल काज मैं करहुँ पुरारी॥

राम-नाम मम देवता, पूज्य परम सुख रूप।
ईश पतिनके ईश अपि, सब धर्मन के भूप॥

(वृ० उ० ट०)

इस ऐसे पवित्र और लाभकारी नाम का जप प्रत्येक कल्याणकामी का काम हो जाता है, इसमें तनिक भी संशय की बात नहीं है। नामकी महिमा शेष-शारदा भी वर्णन नहीं कर सकतीं। फिर, अल्प ज्ञानियों का तो कहना ही क्या?

❀ ❀ ❀ ❀

सन्तों और शास्त्रोंके मन्तव्य आदेशके पालनसे कल्पतरुका सुभग फल अवश्य मिलेगा, यही यहाँका वक्तव्य है—

देखिए—

सियारामहुँते अधिक, नाम सुलभ सुखकारी।
यह प्रभाव लखि, घरनिसत, निसदिन रटत पुरारी॥

जय सिया राम, जय जय सियाराम ।
जय सिया राम, जय जय सियाराम ॥

प्रश्न—'सियाराम' जपना चाहिए या 'सीताराम' ? क्या कुछ अन्तर है ?

उत्तर—नाम दो प्रकार के होते हैं (१) अनादि-निरुपाधि और (२) गुण एवं क्रिया संबंधी। उनमें गुण-क्रिया संबंधी नाम तो कई एक प्रकारसे जपे जा सकते हैं, उनमें कुछ परिवर्त्तन न होकर ही जप होता है, यानी रघुपति, रघुवीर, आदि नाम यथानुपूर्वी ही जपे जा सकते हैं। परन्तु नित्य निरुपाधि नाम श्रीरामनाम है। इसका प्रयोग तथा उच्चारण भी चार प्रकारसे हो सकता है; यथा 'राम, रामा, रामू, रामौ।' इसी प्रकार किशोरी जीके श्रीजानकी, भूमिजा इत्यादि नाम गुण संबन्धी हैं। 'सीता' यह नाम भी गुण सम्बन्धी है,—सीता नाम हलमें लगनेवाली लोहेकी सूचिकाका है और उसके द्वारा जिनकी उत्पत्ति है—वे हैं श्री सीताजी। ये सभी नाम अपनी आनुपूर्वीके अनुसार उसी क्रम से जपे जा सकते हैं, अन्यथा प्रकारसे नहीं। परन्तु 'सियाराम' नामका 'सिया' नाम अनादि और सत्य है। यह भी चार प्रकारसे जपा जा सकता है, यथा—'सिया', 'सिय', 'सीय', 'सीया',।

दोनों नाम अनादि नित्य और पवित्र माने गए हैं। इसी लिए यह कहा गया है कि ये दोनों नाम ही जपके लिये सुकर हैं।

(१) श्रीरामके अनन्त नामोंमें जैसे 'राम' यह नाम प्रथित है उसी प्रकार श्री किशोरी जूके अनन्त नामोंमेंसे 'सिया' नाम सुन्दर और सिद्धि मुक्ति दायक है। यह नामोंका राजा है और इसके जपसे शीघ्र परम शान्ति मिलती है।

(२) यह प्राकृतिक नियम है कि दुल्हासे दुलहिन छोटी होती है—होनी चाहिये, हमारे युगल सरकारकी जोड़ी भी ऐसी ही है। श्री सीतारामके उच्चारणमें 'सीता' में पांच मात्रा और 'राम' में चार मात्रा होती है—'राम' में लघुता आ जाती है, सो न हो इसलिए भी 'सियाराम' नामका उच्चारण करना चाहिए।

(३) जब नाम रट जोरोंसे होने लगती है तो 'सीताराम' का सितारम उच्चारण होने लगता है। पर सियारामको कितनी जल्दी भी जपिए उपर्युक्त चार प्रकारोंसे ही उच्चरित होगा। वे चार प्रकार शुद्ध और सिद्धिप्रद माने जाते हैं।

(४) जब नाम पुकारनेकी भूख बढ़ती है और इसके लिये जब शीघ्र जप आरम्भ होता है तब जितनी जल्दी संख्या बढ़ती है उतना ही आनन्द आता है—तुष्टि मिलती है। ऐसी दशामें श्री सीताराम नाम जपनेपर १ घण्टेमें ६ हजारतक हो जाता है। पर 'सियाराम' नाम १० हजार जपा जाता है। प्रत्येक चेतन प्राणीके ऊपर नाम जपका अवश्य-देय महान् ऋण होता है और उसको पूरा करना प्रत्येकका काम होता है। नाम जप नित्य विधि है और अतएव नाम जपके प्रमादसे

प्रत्यवाय लगता है। फलतः प्रतिदिन नियम और मनोयोगसे नाम जप अवश्य करना चाहिए+ ।

निदान, सियाराम नामका जप कल्याण देनेवाला है, उसका भावनाके साथ जप करना ही इस जीवनका परम कर्त्तव्य सिद्ध हो जाता है। 'जय सियाराम जय जय सियाराम, जय सियाराम जय जय सियाराम !'

—०—

३ प्रश्न—नामको मन ही मनमें जपना चाहिये अथवा उच्चारण करके ?

उत्तर—मन मनमें (उपांशु) जप मन्त्रके लिए कहा गया है। नाम जपके लिए उच्चारणकर कीर्तन ही उत्तम माना जाता है। कहा भी है—

'केतिक भीतर नाम सुजापा, करत न होइ हृदय निष्पापा।
भीतर मन्त्र जपत अघ दहहीं, विधिवत अस श्रुति संतसु कहहीं।
नामहि बाहर रटत रटावत, विधि बिनु श्रम सब सिद्धि जन पावत।
(—वृं० उ०)

उच्चारणकर जपनेसे १२ लाभ हैं—

(१) यह मनुष्य तन वृक्षके समान है। पुण्य और पाप दो पक्षी हैं। वे दोनों आकर इसपर बैठते है, पर नाम-ध्वनिके सुनते ही भाग जाते हैं।—मानव वृक्ष निरंजन बना रहता है।

+ इस विषयका शास्त्रीय सयुक्तिक वर्णन और विस्तार 'कल्याणकी साधना' ७६ पृष्ठसे देखिये।

(२) उच्चारणसे—कीर्तनसे—सुननेवालोंका भी पाप कटता है और सबकी उस ओर प्रवृत्ति होती है। साथ ही नाम सुननेसे सुननेवाले भी थोड़ा उच्चारण कर ही लेते हैं। इस प्रकार बहुतोंके उद्धारका मार्ग खुलता है।

(३) मनुष्य कुसंगमें पड़कर नाम महिमाको भूल गये हैं—नाम जपसे विमुख होकर विषयोंकी ओर झुके हुए हैं, वे ध्वनि सुनकर सचेत हो जाते हैं और भगवानकी ओर बढ़ते हैं। भगवान्‌के मन्दिर का घंटा नामध्वनिसे अचमत्कृत नहीं होता। भगवान्‌का व्यापक मन्दिर तो विश्वका व्यापक आंगन ही है और विश्वके आंगनमें नामध्वनिरूप घंटा नामका मनोहर वादन कितना श्रेयस्कर है।

(४) कीर्तन कर नाम जपनेसे विषमय विश्वके विषय शब्द नहीं सुने जाते। जिससे भगवद्विमुखता पास नहीं फटकती।

(५) उच्चारण करनेके कारण नींद आलस्य भी नहीं सताते। नामोच्चारण और श्रवण साथ ही हो जाते हैं।

(६) नाम ध्वनिको सुनकर ऋद्धि-सिद्धि गुण और कल्याणके सभी अन्य साधन प्रशस्त हो जाते हैं। मन भी पवित्र हो जाता है।

(७) भूत-प्रेतकी बाधा दूर हो जाती है। नामकी ध्वनि सुनकर हिंस जन्तु भी सौम्य हो जाते हैं। भूत-प्रेत भाग जाते हैं।

(८) नामध्वनि करनेसे इन्द्रियोंका व्यापार बहिर्मुख नहीं होने पाता। फलतः इन्द्रियां मनमें विलय हो जाती हैं। यह क्रम ईश्वर प्राप्तिका है।

(९) एकतार-लगातार नाम रटसे श्वांस संकोच होता है—श्वांस संरक्षणको शक्ति बढ़ती है और उससे आयुकी वृद्धि होती है। नामका जापक चिरायु होता है। चिरायु कल्याणका भागी होता है—"जीवन्नरः भद्र शतानि पश्यति" कहा गया है।

(१०) नामके गाने और बजानेसे दुःखोंका नाश होता है। सुखकी प्राप्ति होती है। सुख मानवका 'महान मनोरथ है।'

(११) नाम रटने से शुभाशुभ कर्मका बंधन टूट जाता है। जीवका भ्रम छूट जाता है।

(१२) नामके रटनेसे निज आत्माका बोध हो जाता है। विशेषकर कलियुगमें तो हरिके कीर्त्तनसे ही सब कुछ होता है। कहा है—

"कृते यत् ध्यातो विष्णुं त्रेतायाम् यजतोमखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौतद्धरि कीर्त्तनात्॥

निष्कर्ष यह कि कीर्त्तन पूर्वक नाम जप अधिक कल्याण-कर है।

———

प्रश्न—नाम कितने प्रकारसे जपा जा सकता है?

उत्तर—नामके जपनेके चार प्रकार हैं—उच्चारण, स्मरण कीर्त्तन-और गर्जन।

यथा गर्जन—

भञ्जनं भवबीजानामर्जनं सुख सम्पदाम् ।
तर्जनं यम दूतानाम्, रामनामेति गर्जनम् ॥

अर्थात्—श्रीराम नामका गर्जन संसारके बीज (वासना) को भंजन करनेवाला है सुख और सम्पत्तिका अर्जन है—उससे सुख और सम्पत्ति मिलती है । यम दूतोंके लिये तर्जन (फटकार) है । इसलिए २४ घण्टेमें दो या एक बार अवश्य गर्जन करना चाहिए ।—'उच्चारण'

इससे १२ प्रकारके लाभ होते हैं जो बताये जा चुके हैं। इसके अनुसार वैखरी× वाणीमें प्रेमपूर्वक भगवन्नामका उच्चारण करना चाहिये जिससे आसपासके लोग भी सुन सकें।

तीसरा प्रकार स्मरणका है । इसके अनुसार जहाँ सत्संग होता हो अथवा इसी प्रकारका और कोई अवसर उपस्थित हो, जहाँ बोलनेसे हानि होती हो, वहाँ प्रेमपूर्वक ध्यान करता हुआ भगवानका स्मरण करे ।

चौथा प्रकार कीर्त्तनका है। जब २ या ४ सजातीय (वैष्णव) इकट्ठे हो जावें तब कीर्त्तन करे।

जहाँ नित्य प्रति कीर्त्तन होता है—झाँझ, ढोल आदि बाजोंको बजा बजाकर प्रेमपूर्वक भगवन्नाम ऊँचे स्वरसे उच्चारण किया जाता है वहाँ १ यम् श्रीहरि श्री हनुमानजीके

×कण्ठदेशसे निकलनेवाली वाणीको 'वैखरी' वाणी कहते हैं ।—'वैखरी कण्ठदेशगा' ।

साथ पधारते हैं और उसमें सम्मिलित होते हैं। कलियुगमें कीर्त्तनकी महिमा बहुत बड़ी है।

सभी साधकोंको चारों प्रकारसे नाम जपना चाहिए। प्रत्येकके लिये चारों प्रकार उपयोगी हैं।

—०—

प्रश्न—नाम रटनके कितने प्रकार हैं और वे कौन कौन से हैं? उनसे क्या क्या लाभ हैं?

उत्तर—नामके नव प्रकार होते हैं और सभीसे फल-प्राप्ति होती है।

यद्यपि रटै कवनिउ विधि नामहिं।
फलहि अवशि पूरहि सब कामहिं॥

'तदपि नव प्रकार सह जोई, रटहहि तिन्हैं परम सुख होई।'

नव प्रकार ये हैं—

(१) जगतका भोग त्याग कर मोह निशासे जागे।

(२) शुभ और अशुभ दोनों कर्मोंकी आसक्ति का त्याग करे।

(३) पंच अभिमानको त्यागे, कामादिक अवगुणोंको छोड़ दे।

(४) चंचलता, जग और विषयकी आशाको त्यागे।

(५) पंच तत्वकी कायामें मोह और ममता न करें।

(६) भजनानन्दी रसिक वैष्णवको गुरु बनावे।

(७) सदा प्रभुकी शरणमें रहे। षट् सम्पत्तिको प्राप्त करे।

(८) नामका जप खूब करे।

(९) निरंतर शुभ चिन्तन और भगवद्गुणानुवाद करता रहे।

इन्हीं नवों प्रकारोंसे नाम महाराज अमोघ फल देनेवाले होते हैं। साधककी प्रधान साधना नाम रटना है। जीभकी भगवदुन्मुखी क्रिया कल्पतरुके सरस फलको सुफल बना देती है। नामोच्चारण साधकका परम कर्त्तव्य है।

प्रश्न—नाम रटनेके कितने भेद हैं और उनका साधारण, परिचय क्या है ?

उत्तर—नामोच्चारण के छः भेद हैं। इनका पालन करता हुआ नामका जप करे।

(१) श्री किशोरीजीके बिना जो केवल रामजीको भजता है या उनका ध्यान-सेवन करता है, वह नामको खिझाता है—उसकी पूरी सफलता नहीं होती। इसलिए सीताके सहित रामका उच्चारण (जप) तप, ध्यान करना चाहिये, यह पहला भेद है।

(२) षट् संयम (कम बोलना, कम खाना इत्यादि) का पालन करना।

(३) नाममें अनन्यताका रखना।

(४) मनसा, वचसा कर्मणा हिंसाका त्याग।

(५) नामको त्याग कर किसी प्रपंचता पदलोलुपतामें न फंसना।

(६) तर्कको छोड़कर भेद-भावसे रहित होकर नामका जप करना चाहिए ।

———※———
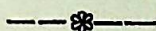
प्रश्न—नाम जपनेके कितने और कौन कौनसे विधान हैं ?

उत्तर—नाम जपनेके आठ विधान हैं और उनका साधारण परिचय यह है —

(१) वैखरी वाणीसे नाम उच्चारण करना ।

(२) लौ लगाकर लगातार अविछिन्न रूपसे भगवन्नामका उच्चारण करना ।

(३) कामिनी और कांचनको काल-समान और भजनमें बाधक समझ कर त्याग करना ।

(४) नाम जपते समय नामकी महिमा और प्रतापके विषय में संशय नहीं करना ।

(५) नामका अर्थ और महिमा ध्यानमें रखकर नाम रटना ।

(६) नाम जापकों का संग खोज-खोजकर करना ।

(७) नामके रहस्यका सुनना, सुनाना, उसका सम्मान और वर्णन करना ।

(८) [यद्यपि भगवन्नामकी महिमासे प्राक्तन पाप दूर हो जाते हैं, पर इसलिए] भगवन्नामके बलपर पाप नहीं करना चाहिये । पापोंसे, पाप, चर्चासे सदा दूर रहना चाहिए ।

इस प्रकार विधि-विधानोंसे किया गया भगवान्‌का जप शुभ फलों को देता है । जो साधक इन नियमोंको ध्यानमें रख-

कर इनका पालन करता हुआ जप करेगा, वह अवश्य ही कल्याणकी साधनामें पूर्ण होगा।

——❀——

प्रश्न—केवल राम नामको क्यों नहीं जपना चाहिए ?

उत्तर—केवल राम नामका उतना फल नहीं है जितना सिया-सहित राम नामका। केवल राम नाम जपसे पाप लगता है। (क्योंकि सिया सहित नहीं जपनेसे वह अधूरा हो जाता है।) इसका रहस्य किसी भजनानन्दी वैष्णव सन्तसे ग्रहण करना चाहिये। बिना आत्माके शरीर क्या रह सकता है ? क्या बिना प्रभाके सूर्य किसी कामका है ? क्या बिना सुगंधके पुष्प-का कोई मूल्य होता है ? क्या गिरा अर्थ और जलबीचिमें कोई भिन्नता होती है ?—नहीं। तो फिर श्री सीताके बिना राम-नाम चल ही नहीं सकता—बिना शक्तिके राम किस कामका। सीता-राममें कभी भी भिन्नता नहीं। रामराम तो केवल सीताजी ही जपा करती हैं और वे ही जप सकती हैं। और दूसरे उनके सदृश बने तो जपें। सीतारामका संयोग सोना-सुगन्धका योग है।

भगवान् शिवने शिवा (पार्वती) जीसे कहा है—

'गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत्।
जपेद्वा ध्यायतो वापि; सभवेत् पातकी शिवे॥'

अर्थात्—'गोरे तेज (श्री सीताजीसे तात्पर्य है) के बिना जो श्याम (श्रीराम) तेजकी अर्चना (पूजा) करते हैं अथवा

जप या ध्यान करते हैं वे हे पार्वतीजी पातकी होते हैं।'

ब्रह्म वैवर्त्त पुराणमें श्री नारदजीके प्रति श्री नारायणका वाक्य है—

'आदौं सीतां समुच्चार्य पश्चाद्रामं वदेद् बुधः।
व्यतिक्रमे ब्रह्महत्यां लभते नात्र संशयः॥'

'जगन्माता च प्रकृतिः पुरुषश्च जगत्पिता।
गरीयसीह जगति माता शतगुणैः पितुः॥'

अर्थात्—विद्वानोंको चाहिए कि पहले 'सीता' का उच्चारण कर पीछे रामका—'सीता राम' का—उच्चारण करें। क्योंकि व्युत्क्रमसे ब्रह्महत्याका दोष लगता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं करना चाहिए।

विश्वके प्राणियोंकी माता प्रकृति (श्री सीताजी) हैं और पुरुष (भगवान श्रीराम) जगतके पिता हैं—इन्हीं दोनोंसे विश्वकी सृष्टि हुई है। मूलमें प्रकृति और पुरुष ही थे और वे श्री सिया रामसे भिन्न नहीं हैं। परन्तु माता पिताओंमें भी, इस लोकमें माता सैकड़ों गुणोंके कारण पितासे श्रेष्ठ है—मानी जानी चाहिए।

इसके प्रसंगमें स्वयं भगवान् श्रीशंकरजीसे कहते हैं—

'एक गुप्त मत अपर मम, तुम सन कहहुँ सप्रेम।
सिया नाम संग रटहिं जे, राम नाम कर नेम॥'
'पावहिं ते थोरे दिन माहीं, सकल सिद्धि कछु संशय नाहीं।
सिया नाम संग रामहिं जोई, रटै सदा तै मो सम होई॥'

इसलिए इस रहस्यको जानकर साधकको सिया राम का ही जप, तप, ध्यान और पूजन करना चाहिए। युगल सरकारकी आराधना कल्याण मन्दिरकी ओर जानेके लिये सबसे सुन्दर राज मार्ग है। अतः 'सिया राम' का ध्यान सदा रहे।

—०—

प्रश्न—क्या नाम जपनेमें अपराध भी बन जाते हैं? यदि हाँ, तो वे कितने और कौन कौनसे हैं?

उत्तर—नाम जापसे १० अपराध बन जाते हैं जिनसे बचना चाहिए। वे ये हैं—(१) साधु निन्दा, (२) और देवताओंको प्रभुके समान कहना, (३) नाम माहात्म्य जानकर भी छल छोड़कर नाम नहीं जपना, (४) नामके बलपर पाप कर बैठना, (यह सोचना कि नाम जपसे पाप धुल जायगा…)। [पाप पाप है और जानकर किया गया पाप वज्र लिपि हो जाता है। प्रभु नाम प्रभावका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। जो ऐसा करते हैं वे सचमुच प्रभुके प्रिय नहीं होते।] (५) कलियुगमें नामके समान ही और साधनोंको बताना, कहना या मानना। (यह निश्चित मत है कि नाम एक कलि-काल अधारा।) (६) मोह और अभिमान वश जान-बूझकर पाप करना, (७) सद्गुरु और भगवानकी अवज्ञा करना, (८) वेद पुराण और भागवत धर्मके सारको ग्रहण न करना, (९) नाम जपनेमें नींद और आलस्यको न त्यागना, (१०) लोभ-के वश नाम उपदेश करना।

इन अपराधोंसे बचना प्रत्येक साधक-नाम जापकके लिये एक उच्च कर्तव्य है। इसका सदा ध्यान रहे कि मुझे सदा निष्काम भाव और पूर्ण मनोयोगसे प्रभुकी अर्चना करनी चाहिए। यदि भूलसे भ्रम वश कोई अपराध हो जाय तो उसके परिशोधके लिए पुनः विधिपूर्वक नाम जप कर लेना चाहिए।

जो कदापि भावी विवश, अपराधौ बन जाय।
'प्रेमलता' तौ ताहि कहि, नामहिं रटै नशाय॥
सीता संयुत राम जो, रटत संतजन कोय।
दश नामापराध तेहिं, प्रेमलता नहिं होय॥

———❀———
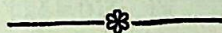
प्रश्न—नाम कितना जपना चाहिए और कब ?

उत्तर—जप संख्याकी कोई अवधि नहीं है कि इतना ही नाम जपा जाय और स्थानका भी बंधन नहीं है कि यहीं और एक ही स्थानपर नाम जपा जाय।

'चलते-फिरतेमें राम, न्हाते धोतेमें राम।
खाते पीते में राम, भजो राम राम राम॥'

यों तो स्नानादि कर शुद्ध होकर पवित्र आसनपर बैठकर भगवान्‌का ध्यान करता हुआ उनके मंगलदायक नामका उच्चारण करना बहुत ही उत्तम है; फिर भी—

'भाव कुभाव अनख आलसहू,
नाम जपत मंगलदिश दशहू।'

के अनुसार जैसे बन पड़े वैसे नाम जप अवश्य करना चाहिए।

नाम जपकी संख्याके विषयमें यह विचार है कि—एक स्वस्थ आदमी १ मिनटमें १५ श्वांस लेता है, सो २४ घण्टोंमें २४×६०×१५=२१६०० होता है। परन्तु सोने दौड़ने अथवा किसी प्रकारके परिश्रमके काम करनेसे श्वांस प्रश्वांसकी गति और बढ़ जाती है। निदान दिन रात भरमें लगभग २५ हजार श्वांस आता जाता है। ये २५ हजार श्वांस प्रभुकी सत्ता, सर्व व्यापकता, और शक्तिकी प्रतिक्षण सूचना देनेवाले हैं। सन्त कहते हैं—

'स्वांस सुफल सोई जानिये, हरि सुमिरन में जाय।
और स्वांस यों ही गए, करि करि बहुत उपाय॥
जाकी पूंजी सांस है, छन जावे छन आय।
ताको ऐसो चाहिए, रहे राम लौ लाय॥'

इसलिए हमें प्रति श्वांस १ अर्थात् प्रति दिन २५००० (पचीस हजार) नाम जप करना चाहिए। इसके सिवा (अभीतक) निष्फल गए श्वांसोंका हिसाब भी बच जाता है। गर्भमें जिसके लिए प्रतिज्ञा की गई थी और जिसका बोध भी हमें नहीं है ऐसे श्वांसोंकी भरती भी करनी होगी। इन सबके लिये २५००० नाम जप और प्रतिदिन होना चाहिए; अर्थात दिन रात भरमें ५०००० नाम जपका क्रम अवश्य होना चाहिए तभी अपनी कर्त्तव्यता (ड्यूटी) पूरी होगी। नहीं तो पिछला कर्ज नहीं चुकेगा। मनुष्यके ऊपर उतना ऋण रहता है। अतः ५०००० का तो नियम रहना ही चाहिए। यों तो एक लाख,

सवा लाख, जितना बन पड़े प्रेम और भक्तिके साथ भगवन्नाम का उच्चारण करना चाहिए। 'सिया राम' नाम तेजी और तन्मयतासे जपनेपर १ घण्टेमें १०००० हो जाता है और 'सीता राम' नाम एक घण्टेमें ६००० पूरता है। इससे सिया राम नामको ही जो कि अनादि और असली नाम भी है (जैसा कि पहले कहा जा चुका है) मालासे या घड़ी देखकर जपना चाहिए और इस प्रकार अपने ऊपरके ऋणको पूरा करना चाहिए।

× × २४ घण्टोंके भीतर पाँच घण्टे उस परम पिता परमेश्वरके नाम जपके लिए, गप्प, शप्प, निद्रा, आलस्य और खेल तमाशेके विनोदको छोड़कर नहीं निकाल सकते? जिस प्रभुने हमें जन्म दिया, जो हमारा भरण-पोषण कर रहा है, जो मनुष्यका परम वाञ्छनीय मनोरथ है—उद्देश्य है, उस प्रभुके पवित्र नामका जप नहीं करना हमारे लिये हजारों लानत और धिक्कारकी बात है। तात्पर्य यह कि जो समय अबुधावस्थामें निकल गया जिसका ऋण बना हुआ है उसको चुकानेके लिए और बचे हुए समयके सदुपयोग होने एवम् ऋण न बढ़ने देनेके लिए प्रति दिन सचेत होकर यत्न पूर्वक अपने नियमको पूरा करना चाहिए अर्थात् ५०००० जप करना चाहिए। यह समझ रखना चाहिए कि ऋण चुके विना यदि शरीर छूट गया तो कल्याण नहीं होगा और फिर ८४ लाख योनियोंमें भटकना पड़ेगा। इसलिए उचित यह है कि शीघ्र ही योग्य वैष्णवी भजनानन्दी गुरुसे दीक्षित होकर नाम जपके भेद भावोंको

जानकर उसके १० दोषोंको [नामापराधोंको] बराकर अपने ऊपर नाम जपके ऋणको पूरा करे। भगवन्नाम और यशका गुणानुवाद करते हुए जप करता जाय और शरीरके रहते रहते उऋण होकर कृतकार्य बन जाय।

इस ऐसे भव्य देशमें, मनुष्यका जन्म पाना, हिन्दू जाति फिर कुलीन घराना और विवेक करनेके लिए बुद्धिका पाना— यह सब कुछ किसलिए? भगवान्‌के भजनके लिए ही। भगवान्‌ने मनुष्यको सभी सुविधाएँ इसीलिए दी हैं कि मनुष्य केवल भोग विलासमें निरत रहने मात्रके लिए ही नहीं है, उसका और भी कर्त्तव्य है। इतनेपर भी, सभी सुलभ साधनोंके प्राप्त होनेपर भी यदि हम ऋण नहीं चुकाते तो हमारे समान पापी अपनी आत्माका हनन करनेवाला कौन होगा?

हे प्रभो! उस जनकी क्या दशा होगी और उसे कौनसी गति प्राप्त होगी। वह कितने दिनोंतक भिन्न भिन्न योनियोंमें यातना भोगता हुआ घोर दुःखका भागी बनेगा!

हे भाई! यदि आप घोर ताप और दुःखोंको छोड़कर परम शान्ति और अमर अक्षय आनन्द-पद प्राप्त करना चाहते हैं और जन्म मरणके बन्धनको छोड़कर एक ही जन्ममें प्रभुसे मिलना चाहते हैं तो नियम और प्रीतिपूर्वक सादर नाम महाराजका (जिनकी प्रभुता, महत्ता) प्रायः पहले सुन चुके हैं और जो कि प्रभुसे भी बड़े हैं, अवलम्बन बिना किसी और दूसरे साधनके शंका और सन्देह छोड़कर श्रद्धा सहित ग्रहण

कीजिए। वे आपका बेड़ा अवश्य पार लगा देंगे। यह पथ निर्द्वन्द्व, निर्विघ्न और निश्चित तथा सन्त महात्माओंका अनुभव किया हुआ, श्रुति शास्त्रोंसे प्रमाणित सरल और सुगमतर है। प्रभुकी इच्छासे इस रास्तेका पता आज आपको लग गया है, देखा हुआ है—निःसन्देह होकर इसपर चलकर अपने ध्येयको प्राप्त करें। इसे पढ़-गुनकर भी आप इस रास्ते-पर नहीं चलें तो समझना चाहिये कि दैव ही आपपर विमुख है, अभी कुछ दिन और भटकना बाकी है। बोलिये—

जय सिया राम जय जय सिया राम
जय सिया राम जय जय सिया राम
सय सिया राम जय जय सिया राम
जय सिरा राम जय जय सिया राम

श्रीसद्गुरवे नमः, श्रीसीताराम नामाभ्यां नमः, श्रीहनुमते नमः।

दूसरा अध्याय

वैष्णव-धर्म प्रसंग

प्रश्न—गुरु-माहात्म्यका थोड़ासा वर्णन कीजिए।

उत्तर—गोस्वामी तुलसीदासजीने गुरुकी वन्दना करते समय कहा है—

वन्दऊँ गुरु पद कंज, कृपासिन्धु नर रूप हरि।
महा मोह तम पुञ्ज, जासु वचन रविकर निकर॥

वन्दऊँ गुरु पद पदुम परागा, सुरुचि सुवास सरस अनुरागा।
अमिय मूरिमय चूरन चारू, समन सकल भवरुज परिवारू।
सुकृत संभुतन विमल विभूती, मंजुल मंगल मोद प्रसूती।
जन-मन-मंजु मुकुर मल हरनी, किये तिलक गुनगन बस करनी।
श्री गुरुपद नख मनिगन जोती, सुमिरत दिव्य दृष्टि हिय होती।
दलन मोह तमसास प्रकासू, बड़े भाग्य उर आवइ जासू।
उघरहिं नयन विलोचन ही के, मिटहि दोष दुःख भव रजनीके।
सूझहि रामचरित मनिमानिक, गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक।

+ + +

प्रेमलताजीका कथन है—

श्री सतगुरु बिनु द्रवत नहिं श्री सियाराम न नाम।
श्री सियाराम सुनाम बिनु, लहहिं न जन विश्राम।
तेहि लग गुरुहित बिलम जनि, करि जन सहहु कलेश।
अरपि अपन पौ शीघ्रतर लीजै शुभ उपदेश।
तन-मन-धन ते वचन ते गुरुहिं करै सन्तुष्ट।
सीखै युगल उपासना, सियाराम की पुष्ट।
गुरु मूरति पूजै सदा पीवे गुरु पद धोय।
गुरु जूठनि भक्षण करै तरै शिष्य भव सोय।
जेहि विधि होय प्रसन्न गुरु तत्तुवेत्ति शिषि सोय।
करै भरै आनन्द उर, अकथनीय सुख होय।

\+ \+ \+

श्री वसिष्ठके, श्री अमर रामायणान्तर्गत श्री महाराज अज प्रति वचन हैं—

विना श्री सद्गुरोरङ्घ्रेः, सर्वं भावेनपूजनम्।
कृत्वा सुखं कुतो लब्ध्ये दन्योपायैः सहस्रकैः॥ १॥
दण्डवत्पतिता भूमौ गुरोरग्रे तु ये नराः।
न च तेषां भयं लोके कालोऽपि मन्यते भयम्॥ २॥
गुरोरङ्घ्रिजलं येन धृतं शिरसि भावतः।
सर्वं तीर्थेषु निःस्नातंते न वै विधिपूर्वकम्॥ ३॥
येनार्पितं तु गुरवे सर्वं यत्स्वात्मकं धनम्।
अक्षयं च धनं प्राप्य पुनर्मोक्षं स गच्छति॥ ४॥

ये तु षोडशविधिना कुर्वन्ति गुरु पूजनम् ।
पूर्णचन्द्रा इवाभान्ति ते लोके नात्र संशयः ॥ ५ ॥
ब्रह्मादयोऽपि पूतांस्तान् गुरुपादाब्ज सेवकान् ।
प्रशंसया पूजयन्ति स्वलोके गमनेच्छया ॥६॥
गुरूत्सवं प्रकुर्वन्ति, प्रेम्णा वित्तव्ययेन च ।
नित्योत्सवो गृहे तस्य न विघ्नानि विशन्ति च ॥७॥
दधति च गुरोः पाद-रजांसि मस्तके नराः ।
तान् सुरा हि नमस्यन्ति तत्रान्येषां तु का कथा ॥८॥
ये त्वश्नन्ति गुरोच्छिष्टं भावेन भक्तितः सदा ।
ते तु बाह्यान्तरः पूता स्तरन्ति भव-सागरम् ॥९॥
ये कुर्वन्ति हरेरर्चान् बिना श्रीगुरुपूजनम् ।
न प्रसीदति हरिस्तेषु कल्प कोटि शतैरपि ॥१०॥
श्री गुरु भुक्त शेषं तु प्रथमं यो भुनक्ति वै ।
पश्चाद्धरि-प्रसादं च महापुण्यं प्रजायते ॥११॥
श्रुतिमूलं गुरोर्वाक्यं पूजामूलं गुरोः पदम् ।
धर्ममूलं गुरोःसेवा शुभमूलं-गुरोः कृपा ॥१२॥
श्रीमद् गुरु विहीना ये गुरुस्नेह विवर्जिताः ।
द्रष्टव्यं न मुखं तेषां सङ्गतिस्तु कुतः शुभा ॥१३॥
नावैष्णवं गुरुं कुर्यान्नानीतेर्मार्गं संसरेत ।
न द्रोहं प्राणिनां कुर्यान्न च पापं समाचरेत् ॥१४॥

अर्थात्—श्री गुरुके चरण कमलोंकी सर्वविधि श्री-पूजाके किए बिना दूसरे हजारों उपायोंसे सुख नहीं मिल सकता १ जो

लोग गुरुके आगे दण्डके समान गिरते हैं—साष्टांग दण्डवत करते हैं, उनको इस लोकमें किसीसे भी भय नहीं रह जाता, प्रत्युत उनसे ही काल भी भय मानता है ॥ २॥ जो गुरुके चरणोदकको भावसे सिरपर धारण करता है वह मानों सभी तीर्थोंमें विधि पूर्वक स्नान कर लेता है ॥ ३॥ जो अपने गुरुको अपने सर्वस्व (सब धनको) अर्पण कर देता है, वह नहीं नाश होनेवाले (अक्षय) धनको पाकर फिर मोक्षको पाता है ॥४॥ जो लोग षोड़शोपचारसे गुरुकी पूजा करते हैं, वे लोग इस लोकमें पूर्ण चन्द्र के समान शोभते हैं, इसमें सन्देह नहीं ।५॥ ब्रह्मादि देवता भी पवित्र गुरुके चरणकी सेवा करनेवालोंको अपने लोकको प्राप्त करानेकी इच्छावाली प्रशंसासे पूजा करते है ॥६॥ जो गुरूत्सवको प्रेम और धनके खर्चसे करता है उसके घर सदा उत्सव रहता है और विघ्नोंका प्रवेश नहीं होता ॥ ७॥ जो लोग गुरुके चरणकी धूलिको मस्तक के ऊपर धारण करते हैं, उनको देवता भी नमस्कार करते हैं—दूसरों की तो कथा ही क्या ! ॥ ८॥ जो लोग सदा गुरुके जूठे भोजनको भक्ति और भावसे खाते हैं, वे बाहर और भीतर पवित्र होकर भवसागर-को तर जाते हैं ॥९॥ जो लोग भगवान्‌की पूजा बिना गुरु-पूजन के करते हैं, उनके ऊपरसे प्रभु सैकड़ों कल्पोंतक प्रसन्न नहीं होते ॥ १०॥ जो गुरुके खा लेनेके बाद बचे हुए भोज्य पदार्थ को पहले और पीछे हरिके प्रसादको खाते हैं, उन्हें बड़ा पुण्य होता है ॥ ११॥ गुरुवाक्य वेदका मूल है। गुरुकी सेवा धर्मका

मूल और गुरुकी कृपा सभी शुभोंका मूल है ॥ १२ ॥ जो श्रीमान् गुरुसे विहीन हैं, गुरुके प्रेमसे वर्जित हों उनका मुख नहीं देखना चाहिये, उनकी संगति तो किसी प्रकार भी शुभ नहीं हो सकती।

\+ \+ ÷

अवैष्णवजनको गुरु नहीं करना चाहिए, अनीतिके मार्गका अवगम्वन नहीं लेना चाहिए, प्राणियोंसे द्रोह (वैर) नहीं करना चाहिए और पापका आचरण भी नहीं करना चाहिए ॥ १४ ॥

प्रश्न—कैसे गुणवालेको गुरु बनाना चाहिए ?

उत्तर—गुरुकी गरिमा विश्व-विश्रुत है। गुरु ही इस भव यातनामें पड़े जीवका उद्धार करता है। प्रभुके कोपसे भी गुरु रक्षा करता है। नाना योनियोंमें क्लेशसे पीड़ित जीवको जन्म-मरणके वन्धनसे छुड़ाकर प्रभुके प्रेम-पाशमें जोड़नेका काम गुरुका होता है और सद्गुरु ऐसा कर जीवका कल्याण कर देता है। इसीलिए गुरुके निर्वाचनमें सावधानी रखनी चाहिए। सद्गुरुकी कृपासे भवसागरको पार करनेमें बड़ी सहायता मिलती है। यह मानव तनु भगवत्प्राप्तिका मुख्य साधन है और गुरु-कृपासे इसको चरितार्थ करना प्रत्येक वैष्णवका धर्म है। इसलिए गुरुकी योग्यताका ध्यान रखकर ही दीक्षा लेनी चाहिए। गुरु आत्मदर्शन करानेवाला पथदर्शक होता है, इसका विवेक भलीभाँति रखकर गुरु किया जाना चाहिए। अस्तु।

गृहस्थको गुरु नहीं बनाना चाहिए; क्योंकि गृहस्थ सांसारिक होता है और वह साधनाकी राहमें पूरे रूपसे सक्रिय नहीं होता और जो चाहे जितना भी ज्ञान, पढ़कर प्राप्तकर लिया हो पर यदि स्वयं वह 'साधक' नहीं है तो शिष्यकी साधनाको आगे चलानेमें सफल होगा, यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता है। संसारमें लगे हुए का उपदेश भी प्रभावोत्पादक नहीं होता। हाँ, चारित्र्यका मूक उपदेश सफलताकी दिशामें पूरा उतरता है, यह निश्चित सी बात है। इसलिए साधनाकी पंक्तिमें बैठे हुए संसारसे विमुख पर प्रभुकी ओर उन्मुख विरक्तको गुरु बनाना चाहिए। परन्तु ऐसे गुरुमें भी कुछ गुणोंको देख लेना चाहिए।–(१) वह जन्मना ब्राह्मण हो, (२) विषयोंसे विरक्त हो, (३) वैष्णव हो, (४) कवि हो, (५) विद्वान् हो, (६) भजनानन्दी हो,(७) तत्ववेत्ता हो एवं इसी प्रकारके १६ गुणोंसे सम्पन्न,योग्य श्रेष्ठ ज्ञानी हो तो उसे गुरु बनाना चाहिए। सारांश यह कि गुरु बनाते समय बड़ी सतर्कता और दूरदर्शिता से कामले; पर दीक्षा लेनेके बाद गुरुमें पूरा विश्वास कर ले और गुरुके सदुपदेशके अनुसार आचरण करे। गुरुका आदर-सत्कार और सम्मान करे। गुरु भगवान्से भी बड़ा बताया गया है— गुरु गोविन्दसे भी बड़ा है। और भी कहा गया है—

पति बिनु जिमि तिय तरुण सुकुमारी, होइ अधमिनि जियै दुखारी।
सतगुरु बिनु तिमि आतम जानहु, करिय बेगि गुरु हठ जनि ठानहु।
भीतर मन्त्र तिलक तुलसी तन, गुरु सन धारण बेगि करहु जन।
लाज शर्म तजि वैष्णव बाना, गुरु सो धारि भजहु भगवाना।

प्रश्न—(१) वैष्णवधर्म तथा (२) पंचसंस्कारों की उत्पत्तिका वर्णन कीजिये।

उत्तर—(१) वैष्णवधर्म अनादि सनातन और शाश्वत है। यह भगवत्प्राप्तिका प्रमुख साधन अतएव मुख्य धर्म है। इस धर्मके अनुसार आचरण करनेवाले प्राणीका कल्याण शीघ्र और अवश्य होता है, यह निश्चित है।

(२) सर्व प्रथम श्री सीतारामजू महाराज साकेताधीशने जीवोंपर निर्हेतुकी कृपा कर, उन्हें अपने सम्मुख आनेके लिये—संसृतियातनासे मुक्त होकर आनन्दकी प्राप्ति करनेके लिए—स्वयम् पञ्चसंस्कारों को प्रकट कर धारण किया जिससे और लोग भी ऐसा ही करें और इस प्रकार कल्याण की साधना साधें। फिर श्री किशोरीजीने उभय शक्ति प्रकट की— (१) श्रीचन्द्रकलाजी और (२) श्री महारमाजी। इसी प्रकार श्री रामजीने (१) श्रीचारुशीला और (२) विश्वमोहिनीजी नामकदो शक्तियां उत्पन्न कीं। इन चारों शक्तियोंको श्रीजानकी-जीने चन्द्रिका मुद्रिकाको छाप और युगल छरकी कंठी गलेमें धारण कराई और षडक्षर सीता मन्त्र दिया। श्रीरामजीने पीत सिंहासन, ऊर्ध्व पुण्ड्रतिलक, अष्टोत्तरी तुलसीकी माला, धनुष-बाण की छाप और षडक्षर राम तारक मन्त्र, युगल गायत्री, शरणागत मन्त्र, युगल मन्त्रद्वयी, युगल नाम-रूप लीलाधाम, उपासना, श्री शृंगारादि पंच रसोंका भलीभांति बोध कराया। इस प्रकार दोनों सरकारोंने जीवोंको निज प्राप्ति और संसारको पार करने

के हेतु पंच संस्कारोंके प्रचार करनेकी आज्ञा दी। अस्तु। ऊपर बताई गईं चारों शक्तियोंने ही प्रचारके लिए सरकारकी आज्ञासे पुरुषाकार आचार्य रूप धारण किये। उनमेंसे श्रीचन्द्रकलासे श्री भरतजी, श्री महारमाजीसे श्री विष्णुजी, श्री चारुशीलाजी से श्री हनुमानजी और श्री विश्वमोहिनीजीसे श्री ब्रह्माजी प्रकट हुए। तब इन्होंने पंच संस्कार धारण करते हुए खास अपनेसे और अपने अपने अंशोंसे भिन्न भिन्न ब्रह्माण्डोंमें भिन्न भिन्न अंशोंको रसिकाचार्योंके रूपमें प्रकट कर श्री वैष्णवधर्म और पंच संस्कारोंका प्रचार किया और कर रहे हैं।

——❀——

प्रश्न—'श्री' सम्प्रदायकी उत्पत्तिका वर्णन कीजिये।

उत्तर—'श्री' सम्प्रदाय जीवोंकी भलाईके लिये निर्हेतुकी कृपा कर श्रीजानकीजीने ही प्रकट किया है इसीसे श्री सम्प्रदाय उत्तम हुआ। इस सम्प्रदायके अनुसार श्रीसीताजीको ही अपना इष्ट मानते हैं। श्रीजानकी मन्त्र, श्री हनुमान पारिषद और श्री महालक्ष्मी आचार्य हैं। इन्हींके नामसे यह 'श्री' सम्प्रदाय प्रसिद्ध है।

——❀०❀——

प्रश्न—श्री किशोरीजी और श्रीरामजीमें किसको बड़ा छोटा कहा जाय?

उत्तर—यह तो प्रकट है कि बड़ेका नाम सर्व प्रथम लिया जाता है। सब कोई 'सीताराम' कहते हैं, 'रामसीता' कोई

नहीं कहता। श्रीसीताजी आदि कारण और आदि शक्ति हैं। श्री रामजी इनका प्रतिविम्ब (छाया) हैं। बिना शक्तिके पुरुष किसी कामका नहीं। रामजी शरीर हैं और जानकीजी प्राण। भगवान् सूर्य हैं किशोरीजी परम ज्योति, इत्यादि। आदि श्री हनुमत्संहितामें पद है—

'तुरीयाजानकी प्रोक्ता, तुरीयो रघुनन्दनः।'

सदाशिव-संहितामें महाशम्भुका वचन है—

जननीसर्वभूतानां योगिनामपि मोहिनी।
स्वयमात्मा द्विधाभूत्वा परानन्दस्वरूपिणी ॥ १ ॥
परमानन्दसन्दोहा ज्ञानानन्द सुविग्रहा।
तस्याः सर्वेऽपिजायन्ते ब्रह्म-बिष्णुमहेश्वराः ॥२॥

मानसमें गोस्वामी तुलसीदासजी की स्तुति है—

उद्भवस्थिति-संसारकारिणीं क्लेशहारिणीम्।
सर्वश्रेयस्करीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभाम् ॥

अर्थात्—प्राणियों के जन्म, पालन और अन्त में संहार करनेवाली, कष्ट को हरनेवाली, सभी कल्याणों को देनेवाली श्रीरामकी प्रिया श्री सीता जी को मैं प्रणाम करता हूँ।

इन वचनों से प्रकट है कि श्री सीता जी ही सारे विश्व का आदिकारण और पालन एवं संहारकरने वाली हैं। वे ही सारे विश्व की जननी हैं और उनकी कृपा प्रत्येक भक्त पर वात्सल्य पूर्ण है। उनकी कृपा से भक्त आनन्द का अनुभव करता है-सायुज्य प्राप्त करता है और उसे युगल सरकारकी बाँकी

झाँकी मिलने लगती है। बस, भक्ति के राजपथ में यही लक्ष्य है। हाँ, भगवान् श्री राम और भगवती महा आह्लादिनीशक्ति श्री जानकी जी की पूजा अर्चा ही जीवन का चरमलक्ष्य हैं।

प्रश्न—पञ्च संस्कार क्या हैं?

उत्तर—तिलक छाप कंठी युगल; युगलमन्त्र निज नाम।
संस्कार ये पांच शुभ; हरण शोक सुख धाम॥

पांचहु संस्कार प्रभु अङ्गा; चेतन अमल अखेद अभङ्गा।
सकल सिद्धि-प्रद आनन्द दायक; सबहि सुलभ सबविधि सबलाय॥
त्रिविध ताप मनवच क्रम पापा, हरण विषाद प्रलाप कलापा।
तीनि काल के कर्म कठोरा, अनमिटहु जो पातक घोरा।
नासहिं सकल विकार अपारा, संस्कार ये पांचहु सारा।
धारण करत जीव प्रभु-रूपा; होत पूज्य तिहुँ लोक अनूपा।
संस्कार पांचो सुभग हेतु रहित हितकार।
भुक्ति मुक्ति, रति, भगतिप्रद, सांचे सरल उदार॥ (वृ.उ.र.)

(१) मस्तक पर उर्द्ध्व पुण्ड्र तिलक, (२) तिलकके दोनों ओर श्री (युगल) सीताराम नामकी छाप, तिलकके बीचमें ऊपरकी ओर किशोरीजीकी चंद्रिका, आँखोंके दोनों कोयोंमें मुद्रिका, बाँयें हाथपर श्रीरामजीके धनुष और दाँयें हाथपर बाणकी छाप, (३) गलेमें श्री तुलसी काष्ठकी युगल कण्ठी, (४) युगल सरकारके युगल मंत्र, (५) अपना गुरु नाम—ये पाँच संस्कार वैष्णव गुरु द्वारा धारण करने योग्य हैं। इनके बिना मनुष्य पशु तुल्य है। ये संस्कार भगवान्के ही रूप हैं जैसा कि ऊपर कहा गया है।

इनके धारण करते ही मनुष्यकी शुभ दशा हो जाती है। बुद्धि भगवान्‌की ओर दौड़ती है और मन पापोंसे हटता है।

ये पंच संस्कार ही वैष्णवधर्मकी मूल जड़ हैं। ये भगवान्‌से मिलनेके पासपोर्ट हैं। इनके धारण करनेसे जीव प्रभुका दरबारी हो जाता है। इनकी महिमा और माहात्म्यको तो रसिक और आचार्य लोग ही कह और जान सकते हैं।

नारद पंचरात्रका एक श्लोक है—

यत् कण्ठे तुलसी नास्ति, ते नरा मूढ-मानसाः।
अन्नं विष्ठा जलं मूत्रं पीयूषं रुधिरं भवेत्॥

शेष गणेश, महेश विधि, आगम, निगम, पुरान।
नारदादि मुनि सिद्ध सुर, शारदादि कवि आन॥
संस्कार यक एक की, महिमा गुण गरुताय।
सब मिलि कोटिन कल्प लगि, गावैं लहहिं न थाय॥

आनन्द संहितामें शङ्करजीके, पार्वतीजीके प्रति, जो वाक्य इन पंच संस्कारोंके बारेमें हैं, उन्हें भी सुनते चलिए।—

चन्द्रिका धार्यते येन, सीता-मस्तक भूषणा।
तस्याचला भवेत्प्रीती राघवे नात्र संशयः॥१॥
रामभक्तैरन्यन्यैर्यैः सीता-राम-प्रसादकैः।
तैरेव धार्यते शश्वच्छ्रीश्च विन्दुश्च चन्द्रिका॥२॥
तिलकं रामरूपं च विन्दुरूपं विदेहजा।
श्रीराचार्यरूपं च धारयेद्धि प्रयत्नतः॥३॥
तत्व-त्रयञ्च विज्ञानमनेनैव सुलभ्यते।
तस्माच्छ्री विन्दु संयुक्तं तिलकं प्रोच्यते बुधैः॥४॥

आद्या जनकजा प्रोक्ता, लकारो लक्ष्मणस्तथा ।
कं ब्रह्म श्रुति राख्याति त्र्यक्षरं तिलकं स्मृतम् ।।५।।

रेखयोरुभयोर्मध्ये श्रियोविन्दुं प्रकाशयेत् ।
कुतर्कावसरो नास्ति सतां सन्मार्गकीर्त्तिनाम् ।।६।।

भक्तिर्न वर्द्धते पुंसां विना बिन्दुं सुमध्यमे ।
यथाङ्क-भागिनां संख्या विन्दुर्नैव प्रवर्द्धते ।।७।।

तथोर्द्ध्वं धारिणां देवि! विन्दुर्विन्दति विन्दुताम् ।
धार्यतां धार्यतां विन्दुस्तिलकं भूषणं कुरु ।।८।।

हारीत स्मृतिमें आया है—

तुलस्या माला तिलकं धनुर्वाणाङ्कितौ भुजौ ।
राम मन्त्रापि नामाढ्य संस्कारौ राम सेवकः ॥

वैष्णव वेष विहीन नर, तनु जिमि सूकर स्वान ।
अस विचारि गुरु करि तरहु, भव निधि भज भगवान ॥

श्री वैष्णव कुल कमल सम, सीता इष्ट सुवारि ।
विकस्यौ रहत सदैव सुख, राम सुभानु निहारि ॥

प्रश्न—षट सम्पत्तियाँ कौन कौन हैं और उनका साधारण परिचय क्या है ?

उत्तर—(१) सम, (२) दम, (३) उपरम, (४) तितिक्षा, (५) श्रद्धा और (६) विश्वास—ये छः सम्पत्तियाँ हैं। प्रभु-मिलनके पथमें ये परम सहायक हैं और अतएव आवश्यक हैं। सद्गुरुके द्वारा इनका पूरा-पूरा परिचय प्राप्तकर इनको अपनेमें लाना चाहिए। थोड़ेमें इनका परिचय इस प्रकार दिया जा सकता है।—

सम—मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार—ये चारों जब असम होते हैं तभी जीव भ्रमता है और नाना प्रकारके दुःखोंको भोगता है। चित्त प्रकाश करता है, मन संग्रह करनेवाला है, बुद्धि गुण-दोषका विचार करती है और अहंकार एक न एकको ग्रहणकर लेता है। साधनाकी राहमें संग्रह और त्याग दोनों त्याज्य हैं। जब इनको त्याग दे और मन, बुद्धि, चित्तको भगवान्‌में लगावे तभी अहंकारका नाश होता है और मन भी भगवान्‌के रूपमें चित्त लगानेसे आप ही स्थिर हो जाता है और फिर बुद्धि प्रभु-अनुकूल हो जाती है। इस प्रकार चतुष्टय अन्तःकरणके समान करनेको सम कहते हैं।

(२) दम—पांच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ ये दश इन्द्रियाँ होती हैं। इन्द्रियोंके पाँच विषय (१) शब्द, (२) रूप, (३) रस, (४) गन्ध और (५) स्पर्श-ये हैं। इन्द्रियाँ अपने-अपने स्थानपर एक-एक देवताको बैठा रखी हैं। वे दश देव इन्द्रियोंकी करतूतें देखा करते हैं। इन्द्रियाँ उस जीवको जो उनको जीत सकनेमें विफल है, खींचकर विषयोंमें डाल देती हैं और जीव विषयोंकी आपात रमणीयता या चकाचौंधमें प्रभुसे विमुख हो जाता है। इसलिए इनको जीते बिना भगवत्प्राप्ति नहीं होती। इनको जीतनेके लिए जितेन्द्रियोंका संग करना, भोजन, शयन और विषयोंको कम करना तथा एकान्तमें बैठकर खूब नाम रटना चाहिए। शरीरको रूखे पदार्थ दे। इस प्रकार एक एक कर इन्द्रियोंको दबा दे तब दमका कार्य पूर्ण हुआ समझना चाहिए। बस, इन्द्रियोंको वशमें कर लेना ही दम है।

(३) उपरम—सांसारिक दृश्य तथा विषयोंके सम्पूर्ण त्याग तथा नातेदार, सम्बन्धी और अन्य वस्तुओंसे वैराग्य उत्पन्न करके भगवत् चरणमें लग जाना ही उपरम है। उपरमसे राम मिलते हैं।

(४) तितिक्षा—दुःख सुखको समान समझनेको तितिक्षा कहते हैं। कृपापात्र दुःखमें ही सुखी रहते हैं। उनके पापः भस्म हो जाते हैं और प्रभु भक्तिमें बलात्कार मन लग जाता है। यह भी है।—

'सुखके माथे सिल पड़े, जो नाम हिये ते जाय।
बलिहारी वा दुःखकी, जो पलपल नाम रटाय ॥'

(५) श्रद्धा—प्रभु और उनके सम्बन्धी कार्यों और धर्मोंके श्रद्धा सहित सेवन करनेसे पूर्ण फल मिलता है—जीवका कल्याण हो जाता है। श्रद्धाके बिना भगवत्प्राप्ति दुर्लभ ही नहीं असम्भव भी समझनो चाहिए। मनुष्यमें श्रद्धाका होना भगवानमें लगनेकी पहली सिद्धि है। इसलिए श्रद्धा सहित पंच संस्कारोंको गुरु द्वारा उपदेशके साथ धारणकर नाम रटन करना चाहिए। श्रद्धाके पाशमें बँधे प्रभु भक्तके पास रहते हैं।

(६) विश्वास—गुरु, प्रभु, शास्त्र और नाम आदिमें अटल विश्वासका होना ही छठी सम्पत्ति है। संशयवाला विश्वासी नहीं होता। अतएव निःसंशय भावसे उपर्युक्त गुरु, प्रभु, शास्त्र, नाम आदिमें एकनिष्ठ विश्वास रखे और साधना करता जाय;- कल्याण होना निश्चित है।—

बिनु विश्वास न होत सिधि, रटतौ श्री सियराम।
तेहि लग करि विश्वास दृढ़, रटहु रटावहु नाम।।

———

प्रश्न—षट् शरणागति कौन हैं ?

उत्तर—(१) प्रभुके अनुकूल ग्रहण 'शरणागति' अर्थात् प्रभुकी ओर प्रवृत्त करानेवाली वस्तुओं और जनोंसे ही केवल प्रयोजन रखना, अन्यमें नहीं।

(२) प्रभु प्रतिकूल पदार्थोंका त्याग। चाहे कोई वस्तु या जन परम स्नेही हो पर यदि वह प्रभुकी साधनामें प्रतिकूल है तो उस वस्तु या जनका त्यागना ही श्रेयस्कर है।—

तजेउ पिता प्रह्लाद ध्रुव, भक्त विभीषण भाय।
गोपिनि पति बलि भूप गुरु, त्यागेउ भरत सुभाय।।

(३) कार्पण्यता—अपने दोष, अवगुण और पापोंको नित्य प्रति विचारे—अन्तर्यामी भगवानसे दुरावे नहीं और प्रभुसे प्रार्थना करे कि हे प्रभु हमारा उद्धार कीजिए......।

(४) गोपतत्व—प्रभुको घट घट व्यापी जानकर निडर होकर उनमें विश्वास करके विचरे।

दशहुँ दिश मंगल सु तेहि, जेहि के प्रभु सब ठाम।
व्यापेउ सर्वानन्द प्रद, जिन्हि कर नाम ललाम।।

(५) रक्षामें विश्वास—भोजन वस्त्रकी चिन्ता छोड़कर प्रभुमें अटल विश्वास रखते हुए नाम रटे।

रक्षा में विश्वास दृढ़, धारि रटै सियाराम।
पंच शरणागति सु यह, समुझहिं संत प्रकाम॥

(६) आत्म निवेदन है।-इस आत्म निवेदनके दो भेद हैं (१) ज्ञानी भक्तोंका और दूसरा उपाय शून्य शरणागति पहली कोटिमें, मर्कट शिशु की तुलना की जाती है। जैसे मर्कट शिशु अपने आप अपनी माताको पकड़े रहता है और जब कभी वह कहीं खेलनेमें तन्मय होकर गिरने लगता है तो माता सम्भाल लेती है, उसी प्रकारका व्यवहार प्रभुके ज्ञानी भक्तोंका उनके बीच रहता है।

दूसरी कोटिमें, मंजारीके बच्चेकी तुलना की जाती है। बिल्लीका बच्चा अपने आपको माताके ऊपर छोड़ देता है; वह स्वयम् कुछ नहीं करता। माता ही उसकी देख रेख किया करती है—उसका योग क्षेम माता करती रहती है। × × भगवान्‌भी शरणागतिमें आये भक्तकी उन्नति और रक्षा किया करता है। उसकी प्रतिज्ञा है—

"तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्"
(गीता ९, २२)

× × × ×

बिना सखीभाव धारण किए और प्रभुके साथ पति-पत्नी सम्बन्ध रखे आत्म निवेदन बनता नहीं।

दुलहिनि बनी आत्मा नीकी, तब कीन्हीं सुधि राम सुपीकी।
गुरु दूती सखि सज्जन वृन्दा, आनि मिलायेउ प्रभु सुख कन्दा॥

———

प्रश्न—प्रभु सेवाके ३२ अपराध कौन-कौन हैं?

उत्तर—(१) प्रभुके पास खिलखिलाकर हँसना, (२) भोजन करना, (३) शयन करना, (४) लेटना, (५) अपान वायु छोड़ना, (६) मिथ्या बोलना, (७) संस्कारहीन शरीरसे उनके समीप जाना, (८) कुसमयमें सेवा करना, (९) विना पैर धोये मन्दिरमें प्रवेश करना, (१०) मन्त्रके विना पूजा करना, (११) विधिविहीन स्नान करना, (१२) विना चाखे भोग लगाना, (१३) नीरस वस्तु अर्पण करना, (१४) विना छने पानी देना (१५) पाँव पसारके बैठना, (१६) प्रौढ़ासनसे सामने बैठना, (१७) नशा पान करके प्रभुके पास जाना, (१८) गन्दे कपड़े धारण करके जाना, (१९) वेद-विरुद्ध मनमानी सेवा करना, (२०) विना भोग मुद्राके भोग लगाना, (२१) पासमें खांसना, (२२) छींकना, (२३) रोगी शरीरसे प्रभुकी मूर्तिको स्पर्श करना, (२४) पीठ फेरकर या इसी प्रकार असावधानीसे बैठना, (२५) प्रभुकी सुछबिको छोड़कर अन्य दृश्योंको देखने लगना, (२६) प्रभुसे अभय रहना, (२७) सकाम सेवा करना, (२८) इष्टके चरित्र न सुनना, (२९) नाम न रटना, (३०) षट् सम्पति और षट् शरणागतिको न धारण करना, (३१) अनन्यता न धारण करना और (३२) प्रभु प्रसाद न पाना। इन अपराधोंको बराकर जो प्रभु सेवा करते हैं। वे ही सेवा (प्रभुदर्शन) पाते हैं, दूसरे नहीं, यह निश्चित है।

प्रश्न—हमारा वास्तविक रूप क्या है?

उत्तर—यह स्थूल शरीर तो जड़ है, पर सर्व ब्रह्मांड भर

(जड़ चैतन विश्व भर) का ब्रह्मादिसे लेकर जीवमात्रकी आत्माका स्त्री स्वरूप है। अतएव इसका पुरुष वाचक शब्द से व्यवहारमें प्रयोग नहीं होता। यह सारी सृष्टि मायाका कार्य है। माया ही कारण है सो भी स्त्री रूप ही है। पुरुष तो एकमात्र श्री रामजी ही हैं। यथा अथर्व संहितासे प्रकट होता है।—

हिरण्य गर्भः समवर्त ताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
सदाधार पृथ्वीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

पद्मपुराण पाताल खण्डके ६४ वें अध्याय में आया है—

श्रीरामएव पुरुषो ब्रह्माद्या स्त्रिय एव च।
सर्वे देवा प्राकृतिकाः यावन्तो मूर्ति-धारिणः ॥

विष्णुपुराणमें भी आता है—

स्वयं हि बहवो भूत्वा रमणार्थं महारसः।
तयापि रमया रेमे प्रियया बहुरूपया ॥

बृहदुपासनामें प्रभुका ऋषियोंके प्रति वचन है—

पुरुष एक मैं भोग्यता, योग सकल संसार।
जड़ चेतन तिय रूप सब, जानहिं बुध न गँवार ॥

सखी भाव बिनु भक्ति न होई, भक्ति हीन मोहि पाव न कोई।
आत्म ज्ञान बिनु यह सखि भावा, दुर्लभ वेद पुराणन गावा ॥
तेहि बिनु होइ न आत्म-निवेदन, आत्म दिये बिनु नाशन खेद न।
पति-पत्नी सम्बन्ध अनादि, मम चेतन कर लखहिं न बादि ॥
सकल भाव तिय भाव विहीना, निरस जानि जिये तजत प्रवीना।
नारि रूप जग भोग हमारा, प्रगटायेउ सब सिय सुख सारा।

जगतपति, रघुपति (रघु जीव, उसके पति) प्रभु के नाम ही हैं। जब सारा जगत स्त्री रूप है तभी तो वे इन सबके पति हुए। शङ्कर भगवान् पुरुष के लक्षण यों बताते हैं। —

पुरुष प्रसिद्ध प्रकाश निधि, प्रगट बराबर नाथ।
रघुकुल मणिमय स्वामि सोई, कहि शिव नायेउ माथ॥

यह सब गुण इन दाढ़ी मूँछधारी नरोंमें कहाँ मिलते हैं? इन सबोंमें तो रावणके बताए नारियोंके आठ अवगुण साहस, अशौच, अदाया, चपलता इत्यादि मिलते हैं। इसलिए सद्गुरू पाकर आत्म बोधकर शीघ्र ही आत्म निवेदन द्वारा कल्याण प्राप्त करना उचित है।

प्रश्न—भक्तिके कितने प्रकार हैं?

उत्तर—इसके प्रकार अलग-अलग माने गए हैं। ;भागवती भक्ति अर्चन, पूजा इत्यादि नौ प्रकारकी तथा रामायणमें भी प्रभुसे कथित नवधा भक्ति है। परन्तु, वैष्णवोंकी नवधा भक्ति अलग है जिसके भेदोंको लेकर भक्तिके मुख्य १२ प्रकार होते हैं—

(१) पंच संस्कार धारण करना, (२) छल कपट छोड़कर गुरु सेवा करना, (३) सजातियोंका संग करना, (४) भक्तोंका चरित्र सुनना-पढ़ना, (५) षट् सम्पत्ति और षट् शरणागतिको भेद सहित जानकर धारण करना, (६) सियाराम नामकी रटन करना, (७) प्रभु सेवाके बत्तीस अपराध बराकर प्रभु सेवा करना, (८) प्रभु गुणगणोंका गान करना तथा पढ़ना सुनना, (९) प्रभुके धाममें वास करना, (यहाँतक नवधा भक्ति हुई) ;

(दशधा) (१०) अष्ट कुञ्जोंमें अष्टयामकी भावना सखि-भाव द्वारा मानसिक पूजा करना, (११) प्रेमा—में आत्मनिवेदन करना, प्रभुका परिकर बनकर सर्वस्व अर्पण करना और (१२) परा—में प्रभुका ही अङ्गी बन जाना है।

प्रभुका वचन है—

वेद सु शास्त्र पुराण मत, कर्म उपासन ज्ञान।
श्रवन कथन सतसङ्ग सब, नवधा लगि मुनि जान॥

दसधा में छूटहिं सब कर्मा, रहत वेष इक वैष्णव धर्मा।
एकादस यह होइ विसुद्धा, सब धर्मनि ते विमुख विरुद्धा।
पाप पुण्य कर डर नहिं ताही, प्रेमा भक्ति जासु उर आही।
बहुरि द्वादसी सबके पारा, पावत मुनि मम जनु सु उदारा।
जो साधहिं यह भक्ति द्वादस, मोर कथित विधिवत तज अनरस।
सो पावहि मोहिं संशय नाहिं, बारम्बार कहौं तुम पाहिं।
द्वादस महँ एकहु दृढ़ धारैं, आप तरैं भव अवरनि तारैं।
सब भक्तिन महँ प्रेम प्रधाना, तेहि बिनु होत न आतम ज्ञाना।

द्वादश भक्ति आराधक, साधक अति प्रिय मोर।
करहुँ सहाय तिन्हकी सदा, नाश कुसंकट घोर॥

प्रश्न—षट संयम क्या हैं।

उत्तर—(१) शुद्ध और सूक्ष्म भोजन करना, (२) कम सोना, (३) कम बोलना, (४) इन्द्रियोंको विषयोंसे रोकना, (५) नाटक-तमाशे न देखना, (६) एकान्त या अखेद स्थानमें निवास करना, जहां अपनेको औरोंसे एवं औरों को अपनेसे खेद न प्राप्त हो।

भोजनका प्रभाव मानसिक स्थितिपर अवश्य पड़ता है और उसके :कारण साधककी साधना प्रभावित होती है। इसीलिए शास्त्रोंने 'अभ्यवहार' की नियम-संयत व्याख्याकी है। 'भोजन जीनेके लिए करना चाहिए, भोजनके लिए जीना नहीं चाहिए' इस कहावतका अर्थ भी इसी दिशाका है।

कम सोना, कम बोलना, इन्द्रिय निग्रह, नाटक आदिमें अरुचि और एकान्त निवास—ये गुण ऐसे हैं कि भक्तोंको इनका मनन और निदिध्यासन अवश्य करना चाहिए। कल्याणकी साधनाके मार्गमें विश्राम देनेवाले ये सुभगफलद वृक्ष हैं। इनकी छायामें आराम करता हुआ साधक आसानीसे 'लक्ष्य'-मन्दिर तक जा सकता है। संयम देवत्व है (इसलिए कि वह देवत्व प्राप्त कराता है), संयतजन देव है।

—-०-—

प्रश्न—वैष्णव भक्तकी जीवात्मा प्रभु सन्निधि कैसे प्राप्त करती है?

उत्तर—लोकाचार्य-द्वारा जब जीव यथार्थ निजात्म बोध कर लेता है, जीवन पर्यन्त सदा नाम रटन करता है, वेषमें दृढ़ रहकर भलीभाँति शृङ्गार भावको अपनाकर सखी भावसे उपासना करता हुआ शरीर त्यागता है तो जीवात्मा स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरोंको त्याग विमान द्वारा परम-धाम श्री साकेतकी यात्रा करती है। तब साकेतके द्वारपर श्री भौमा भगवानसे भेंट होती है। उनके श्याम और सफेद दो बाल हैं,

जिनसे नर-नारायण अवतार होता है। जीवात्मा उनसे उपदेश ग्रहण कर सिय-महिमा और लोक महिमाको जानकर विरजा स्नानकर, सखी रूपको प्राप्तकर, श्री महात्माजीसे भेंटकर, श्री विश्वमोहिनीसे मिलकर श्री चारुशीलाके साथ श्री भूलीला आदिके धामोंमें होती हुई श्री चन्द्रकलाजीको प्राप्त होती है।

× × × ×

[श्री चन्द्रकलाजी अनन्तकोटि सखी गणोंकी यूथेश्वरी हैं। उनकी कृपाके बिना जीव प्रभुको प्राप्त नहीं कर सकता। उनकी कृपासे ही परम अगम्य महली-सेवा और सुख प्राप्त होता है। महली सेवा पुरुष भाववालोंको वर्जित और अगमतर हैं; वहाँ-का भेद वेदादि भी नहीं जानते। वह स्थान पुनरागमनसे रहित कर देता है। केवल प्रभुके कृपापात्र आत्मज्ञाता रसिकाचार्य लोग ही उसके भेद-भावको जानते और पाते हैं। अस्तु।]

श्री चन्द्रकलाजी फिर उस जीवात्माको सखी रूपसे प्रभु-सन्निकट पहुँचा देती हैं।

——❀——

प्रश्न—क्या शरीर और आत्मा—इन दोनोंसे प्रभुकी सेवा की जाती है?—और किसीने उभय रूपसे की भी है?

उत्तर—हाँ, दोनों रूपोंसे ही नहीं, प्रत्युत तीन रूपोंसे सेवा होती है, होनी चाहिये और बहुतोंने की है। रहस्य रामायणमें कहा है—

लक्ष्मणा लक्ष्मणः प्रोक्तो भरतश्चन्द्रकला तथा ।
शत्रुघ्नः सुभगा जातः चारुशीला मरुत्सुतः ॥१॥
शङ्करो प्रीति-शीला च, सुशीला व्यास-पुत्रकः ।
हेमरूपा च वैधात्री, रूपं हि महतां सदा ॥२॥
गानशीला तथा व्यासः, धर्मशीला हरिः स्वयम् ।
सुतीक्ष्णो श्रुतिशीला च मन्त्रशीलाचागस्त्यो वै ॥३॥
वाल्मीकिर्नामशीला च वामदेवो तथा रतिः ।
त्रिधा रूपेण वर्त्तन्ते महतां धर्म शालिनाम् ॥४॥
आचार्यत्वेन ब्रह्माण्डे, दासरूपेण सन्निधौ ।
रामस्यान्तः पुरे ते वै सखीरूपाः प्रियानुगाः ॥५॥

———✿———

उपर्युक्त प्रमाणसे प्रकट है कि ब्रह्माण्डमें जीवोंके उद्धारार्थ आचार्य रूपसे, भगवानकी बाहरी सेवा दास रूपसे और अन्तः पुरका भीतरी सेवा सखी रूपसे ऊँची कोटिके उपासकलोगोंने की है ।

—०—

प्रश्न—मनको स्थिर करनेके क्या उपाय हैं ?

उत्तर—(१) मन स्वभावसे ही चंचल है। यह तभी अचंचल हो सकता है जब महाचंचला माया और चंचल मन-वालोंका संग छोड़ दे। (२) शरीरको अपने काबूमें बनाए रखे; मनके कहनेपर न छोड़े। (३) चतुष्टय अन्तःकरणको सम करे। अर्थात्—बुद्धिसे जो स्वभावतः भगवद्नुकूल होती

है निश्चय करे, चित्तसे विवेचन और अहंकार द्वारा ग्रहण और त्याग करे। (४) भजनानन्दी वैष्णव गुरुका अवलम्ब ग्रहण करके उनकी आज्ञानुसार आचरण करे। (५) सिया राम नामकी खूब रटन करे—[चाहे मन कहीं भी दौड़े]। (६) मन स्त्रीके समान है जो कि पति प्राप्त होनेतक नाना प्रकारके खेलों और गुड्डे गुड़ियोंसे मन बहलाती रहती है। वही विवाह होनेपर पतिप्राप्त होनेसे सब खेलोंको त्यागकर उसीमें मन लगा देती है। इसी प्रकार मनका जबतक भगवान्‌से सम्बन्ध नहीं जुड़ता तभी तक वह इधर उधर दौड़ता है। सम्बन्ध होते ही एक जगह स्थिर हो जाता है। अतः सद्‌गुरु द्वारा शीघ्र ही प्रभुसे अपना सम्बन्ध जोड़े। मन स्वयम् स्थिर होकर कल्याण प्राप्त करा देगा।

इस प्रकारका अभ्यास करते रहने से वैराग्यके बल द्वारा मनको जीता जा सकता है। मनको जीतनेके ये ही उपाय उत्तम हैं। और, मनके जीते जीत है, मनके हारे हार।

प्रश्न—ब्रह्म निर्गुणसे सगुण क्यों हुए?

उत्तर—जब ब्रह्मने अपने स्वरूपमें कुछ कमी देखी तभी तो सगुण हुए; वरना सगुण होनेकी क्या आवश्यकता रही। निर्गुण ब्रह्म किसीके काममें नहीं आता और वह भी किसी प्रकारका सुख या आनन्द स्वयं आनन्द स्वरूप रहता हुआ भी नहीं ले सकता था, क्योंकि आनन्दके अनुभवके लिए सगुण—सरूप होना आवश्यक था। मिश्रीकी मिठासका अनुभव मिश्रीको नहीं हो सकता। उसका लाभ कोई सचेतन देहधारी ही उठा

सकता है। इसी प्रकार प्रभु भी अपने 'आनन्द' स्वरूपका लाभ नहीं उठा सकते थे—बिना सगुण हुए। फलतः उन्होंने उत्तम रूप सगुण स्वीकार किया।

'अगुन अरूप अलख अज जोई, भगत-प्रेम-बस सगुन सो होई।'

इसी प्रकार उनके सगुण हुए बिना जगतकी उत्पत्ति, स्थिति भी कैसे बनती ? जैसे कारणसे कार्य—कपाससे वस्त्र, बीजादिसे वृक्षादिकी उत्पत्ति होती है—कार्यसे काम होता है, कारणसे नहीं, अथच बीज किसीके कामकी चीज नहीं है पर वही वृक्ष रूपसे प्रगट होकर पत्र, पुष्प, फल, छाया, लकड़ी आदि-अनेक रूपोंसे लाभप्रद हो जाता है—वैसे निर्गुण ब्रह्म साधनाकी कोटि में बेकाम है, पर सगुण प्रभु भक्तोंके लिए 'कल्पवृक्ष' हैं, भक्त चाहे जो माँग ले। सगुण प्रभु स्वयम् मंगल मनोरथ हैं!

जेहि कहँ निर्गुण भाषहिं ज्ञानो, भक्त कहहिं तेहि सगुन बखानो ॥
सगुन ब्रह्म तन केर प्रकासा, निराकार निर्गुन सोइ भासा ॥
मूरति कर जो तेज लखावत, निर्गुन ब्रह्म ताहि श्रुति गावत ॥
सोइ निर्गुन सोइ सगुन सरूपा, नाम रूप दोउ एक अनूपा ॥
निर्गुन राम सगुन सिय जोऊ, बाहिर भीतर व्यापेउ दोऊ ॥

(बृ० उ० र०)

वेदोंने भी भगवान्‌की स्तुति करते हुए कहा है।—

'जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप शिरोमने !'

इसलिये उन प्रभुके दोनों ही रूप हैं। सगुन संसार और

भक्तोंके कामकी चीज़ है, निर्गुन भक्तोंके लिए उपादेय नहीं।

प्रश्न—विशिष्टाद्वैत क्या है?

उत्तर-वेदके तीन कांड हैं—(१) कर्म,(२) उपासना और(३) ज्ञान। इन तीनोंकी तीन क्रियाएँ हैं—कर्म भयानक, उपासनाकी यथार्थ, ज्ञानकी रोचक। अब उपासना या यथार्थ क्रियाके तीन प्रकार हैं—(१) अद्वैत, (२) द्वैत और (३) विशष्टाद्वैत।

अद्वैत उपासनामें एक ब्रह्म सबमें ओतप्रोत है। उसमें न ममता है, न माया, न राग और न द्वेष। फिर इस ज्ञानमें न किसीसे विरोध बनता है और न प्रेम। न भोग बनता है न कर्म।

परन्तु इस पंथके अनुयायियोंमें ये सभी क्रियाएँ देखी जाती हैं।× ×फलतः इस सिद्धान्तको कैसे ठीक जहा जाय?

द्वैत सिद्धान्तवाले ब्रह्म और माया दोनोंको मानते हैं; अर्थात् श्री सीताजी (मायां) श्रीरामजी (ब्रह्म) इन दो की उपासना करते हैं। इस सिद्धान्तमें उपासकका अस्तित्व कहाँ रहा? इससे यह सिद्धांत भी ठीक नहीं ठहरा।—

तो फिर ठीक क्या है?—बस वही विशिष्टाद्वैत सिद्धांत। इसमें माया, ब्रह्म और जीव अर्थात श्रीरामजी ब्रह्म, श्री सीताजी माया और लखनलालजी जीव ठहरते हैं।

पराशक्ति माया सिया, लखन लाड़िले जीव।
तिन्हके संग विहरहिं सदा, राम परात्पर सीव॥

श्री किशोरीजीका महात्मा के प्रति यह वचन है:—

जीवातम मम, मैं पति मोरे, ये तिहुँ नित्य लखहिं जन थोरे ।।
ब्रह्म, जीव मैं ये तिहुँ रूपा, एक अनादि अखंड अनूपा ।।
यही विशिष्टाद्वैत कहावत, त्रिधा रूप नित सत श्रुति गावत ।।
द्वैताद्वैत अरूप बखानत, ब्रह्महि ते न यथारथ जानत ।।

यह सु विशिष्टा द्वैत मत, मोर सम्प्रदा केर ।
सत्य सनातन जानि जिय, आराधहिं जन ढेर ।।
श्री सिया राम उपास्य दोऊ, जीव उपासक रूप ।
यहिं कहं कहत उपासना, अचल अनादि अनूप ।।

इसकी उपमा निहाई, सँडसी और हथौड़ाके समान है। इनमें यह नहीं कहा जा सकता कि कौन पहले हुआ। तीनों ही अनादि हैं और एकके बिना दूसरेसे कोई कार्य नहीं बन सकता।

प्रश्न—कुञ्ज कितने हैं और कौन कौन ?

उत्तर—कुञ्ज ९ हैं।

(१) शयन कुञ्ज, (रात्रि का), (२) स्नान कुंज, (३) शृङ्गार कुंज, (४) कलेउ कुंज, (५) भोजन कुंज, (६) शयन कुंज, (७) केलि कुंज, (८) हिण्डोल कुंज, (९) रास कुंज। इन ९ कुंजों में अष्टयामकी भावना गुरु द्वारा समझकर करे।

प्रश्न—बारह वन कौन कौन हैं ?

उत्तर—अष्ट कुंजोंके चतुर्दिश १२ वन हैं।—

(१) शृंगार वन, (२) तमाल वन, (३) विहार वन, (४) रसाल वन, (५) पारिजातक वन, (६) चम्पक वन,

[७] चन्दन वन, [८] अशोक वन, [९] विचित्र वन, [१०] कदम्ब वन, [११] अनंग वन और [१२] नागकेशर वन।

प्रश्न—सत्संगके ८२ अपराध कौनसे हैं ?

उत्तर—(१) कपट, (२) दम्भ, (३) पाखण्ड, (४) कुमति, (५) ईर्ष्या, (६) अभिमान, (७) काम, (८) क्रोध, (९) मद, (१०) लोभ, (११) अजितेन्द्रियता, (१२) मन की चंचलता, (१३) गर्व, (१४) अपने हो अपने कहना (अपनी ही वाक्य-पटुता देखाना), (१५) औरोंका न सुनना, (१६) सत्संगमें बुद्धिको चारों ओर दौड़ाना, (१७) मन किंवा चित्तको स्थिर न रखना, (१८) आलस्य लाना, (१९) निन्दा-स्तुतिको सुनकर विषाद और प्रसन्नताका होना, (२०) चित्तमें दुविधा [संशय] का रहना, (२१) दूसरेकी आशा, (२२) कुमतियोंका संग पाना, (२३) बिना श्रद्धा फल चाहना, (२४) कटु-वचन बोलना, (२५) सत्कार्यमें लोक-लाज, (२६) सांसारिक-व्यवहारोंमें ही निरत रहना, (२७) विषयमें प्रीति, (२८) तृष्णा, (२९) मोह, (३०) मान, (३१) कुलका अभिमान रखना, (३२) पर-स्त्रीको देखना, (३३) इष्टदेवका विश्वास त्यागना, (३४) लोलुपता, (३५) एक देवमें अनन्यता न रखना, (३६) कामिनीका संग करना, (३७) प्रभु-तत्त्वको न जानना, (३८) गुरुमुखसे उपदिष्ट गुप्त-रहस्यको जहाँ-तहाँ बखानना, (३९) पढ़ सुनकर सुसंगको त्यागना, (४०) अपनेको

पण्डित मानना, (४१) श्री 'सीताराम' को न रटना, (४२) त्यागी बनकर संसारी-मनुष्योंकी आशा रखना, (४३) आत्म-रूपको भूलकर मृत्युका भी भय न करना, (४४) बिना सियाजू के रामजीका स्मरण आदि करना, (४५) मादक-वस्तुओंका ग्रहण करना, (४६) नाम-रटनेमें कदराना (दीर्घसूत्रता या आलस्य करना), (४७) डटकर भोजन करना, (४८) कृत-विद्य होनेपर भी-विवाद करना, (४९) संसारसे प्रीति बढ़ाना, (५०) बुरे कर्मको करके ढोंग रचना, (५१) दिनमें सोना, (५२) रातमें बिना देखे भोजन करना, (५३) बिना छना पानी पीना, (५४) रामचरितको त्यागकर दूसरी कथा-कहानीमें मन लगाना, (५५) हिंसामें रत रहना, (५६) भोगमें बुद्धिको लिप्त रखना, (५७) श्री सीतारामजीको छोड़कर और-और देव-ताओंकी पूजामें भटकते फिरना, (५८) प्रभुसे अपने पापों और दुर्गुणोंका दुराव करना, (५९) गुरुको साधारण मनुष्य समझना, (६०) भाववर्जित (दिखाऊ) भक्ति करना, (६१) सन्तकी जातिकी जिज्ञासा करना, (६२) प्रसादको 'अन्न' सम-झना, (६३) मन्त्रको छोटा मानना, (६४) चरणोदकमें जल-भाव रखना, (६५) मूर्तिमें जड़-भावना होना, (६६) शिश्नो-दरका दास होकर भी राम-सनेही कहाना, (६७) परदोष सदा कहना, (६८) राम-भक्त होकर भी गृहस्थों (सामान्य लोगोंसे) याचना करना, (६९) स्वयं प्राप्त पदार्थोंसे संतोष न करना, (७०) बिना बोध हुए वैरागी बन जाना, (७१) सन्त और गुरुसे

विमुख रहना, (७२) दाम और चाममें प्रीति (भक्तिमें विरति), (७३) धनाढ्योंका सम्मान और निर्धनोंका अपमान करना, (७४) स्वयम् मन, वचन और कर्मसे मलिन रहनेपर भी दूसरोंको ऐसा बताना, (७५) दूसरोंसे झगड़ना, (७६) धर्म-हीनता, (७७) निर्दयता, (७८) कुतर्क, (७९) अविवेकता, (८०) उन्मत्तता, (८१) प्रमादता और (८२) स्वेच्छाचारिता।

इन ८२ अपराधोंको बचाकर सतसङ्ग करनेसे साधारण-जन भी सन्त हो जाता है, वह साधु ही है—

'साधुरेव स मन्तव्यः।'

प्रश्न—दण्डवत (प्रणाम) करनेकी क्या विधि है ?

उत्तर—दण्डवत करनेकी तीन विधियाँ हैं।

(१) साष्टांग-दण्डवत;—नासा, उर, युगलकर, उभयजानु, दोनों पाद, इन आठ अङ्गोंसे प्रणाम करना।

[यह विधि पुरुषोंके लिए कही गई है।]

(२) सप्त-अङ्गोंसे दण्डवत;—नासा, दोनों हाथ, दोनों जानु और दोनों पैर,—इन सात अङ्गोंसे प्रणाम करना।

[यह विधि स्त्रियोंके लिए है।]

(३) मन, शिर और नेत्रोंसे, भावके साथ प्रणाम करना।

[यह सर्वसाधारण—सबके लिए है।]

शास्त्रों और सन्तोंका आदेश है कि सभी कार्य विधि-पूर्वक किया जाना चाहिए। बिना विधिका किया कार्य फल देनेवाला नहीं होता; अविधिसे पाप भी लग जाता है। प्रणाम करनेकी

विधियाँ कही गईं, उन्हीं विधियोंसे प्रणाम करना चाहिए. अन्यथा फल नहीं मिलता है। अविधि-कार्यकी निन्दा की गई है। प्रणाम करना देवत्व है !

प्रश्न—तिलक कितनी जगह, कहाँ-कहाँ लगाना चाहिए ?

उत्तर—तिलकको १२ अङ्गोंमें लगानेकी विधि है—

"प्रथम ललाट, सु कंठ उर; नाभि कुक्ष दोउ ओर।
आदि अन्त युग पृष्ठपर; चारि भुजन चित-चोर ॥"

अभीतकके प्रश्नोत्तरोंसे सिद्ध है कि अपने कल्याणके लिए प्रभुकी शरणमें जाना चाहिए और उनकी प्रीति और कृपाके लिए आदर और प्रेमपूर्वक युगल नाम (श्रीसियाराम) का जप करना चाहिए। इस कार्यको नियमित और पूर्णरूपसे चलानेके लिए सद्गुरुकी आवश्यकता होती है, अतएव वैष्णव-सद्गुरुसे दीक्षा लेकर अपने अमूल्य मनुष्य-जन्मको चरितार्थ करना चाहिए। **नाम जप अमोघ फल देता है !**

भजु मन सुवचन काय सिया बावरे ॥

संसार घोर-धार जीव डूबते परे,
अज्ञान-विवश मोह त्यागि नाम नावरे ॥ १ ॥

मन भूलि भर्म जार भार शीश उठाया,
दुर्लभ शरीर पाय सदा नाम गावरे ॥ २ ॥

मैं मोर तोर करत बादि तोर तू नहीं,
बिनु नाम सियारामके सुजन्म जावरे ॥ ३ ॥

तजि कर्म धर्म योग जाप नेम साधना,
सियराम नाम करु सुजाप सहित भावरे ॥४॥

धन धाम वाम सुवन जगत मान बड़ाई,
विहाय सियाराम काम कछु न आवरे ॥ ५ ॥

परलोक लोक शरणपाल हरणशोकके,
सुख धाम सिया राम से न स्वामि पावरे ॥६॥

यह नर शरीर भरत खंड पाय सुरसरी,
बाजी सम्हारि खेलि अब न हारि दावरे ॥ ७ ॥

अलि 'प्रेमलता' सुमिरु नाम बिगरिउ बने,
गुरुदेवके सुचर्ण कमल अमल ध्यावरे ॥ ८ ॥

जय सिया राम, जय जय सिया राम ।
जय सिया राम, जय जय सिया राम ॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम ।
जय सिया राम, जय जय सिया राम ॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम ।
जय सिया राम, जय जय सिया राम ॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम ।
जय सिया राम, जय जय सिया राम ॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम ।
जय सिया राम, जय जय सिया राम ॥

श्री सद्गुरवे नमः । श्री सीतारामनामाभ्यां नमः । श्रीहनुमते नमः ।

तीसरा अध्याय

उपदेश सार

(१) प्रतिदिन प्रातःकाल ३ बजे (ब्राह्म मुहूर्तमें) उठकर—

'पंच पंच ऊषः कालः, षट पञ्चारुणोदयः ।
सप्त पञ्च-भवेत प्रातः, शेषः सूर्योदयः स्मृतः ।।

शारीरिक शुद्धि कर 'जय सियाराम, जय जय सियाराम' नामको रटना चाहिये । यदि २ या ४ सजातीय मिल जायँ तो कीर्त्तन करे ।

(२) यत् कण्ठे तुलसी नास्ति ते नरा मूढ़मानसाः ।
अन्नं विष्ठा जलं मूत्रं पीयूषं रुधिरं भवेत् ।।

(— नारद पञ्च रात्र)

इससे उचित है कि प्रति दिन, पंच संस्कार धारण करके ही खाना पानी ग्रहण करे और संस्कारहीनके यहाँका अन्न जल न ग्रहण करे ।

(३) तमाखू भंग मद्यानि ये पिबन्ति नराधमाः ।
तेषां हि नरके वासो यावद् ब्रह्मा चतुर्मुखः ।।

गृहीत्वा वैष्णवो दीक्षां तमालं प्रपिबन्ति ये ।
मिथ्या जाप्यं च मौनं च वृथा दीक्षा फलं श्रुतेः।।

इससे कल्याणके साधकोंको उचित है कि धूम्रपानादि शास्त्रीय वर्जित (मसूर, सुर्ती, बन्दगोभी, लहसुन, प्याज इत्यादि) वस्तुओंको भी न ग्रहण करें और जिन्होंने ग्रहण कर लिया है वे भी शीघ्र—अति शीघ्र छोड़नेका उद्योग करें।

(४) बिना छना जल या दूध, बिना तुलसीके और बिना प्रभुके अर्पण किये भोजन कभी ग्रहण न करे।

(५) पाँच चीजें सदैव शुद्ध रखे—(१) तन, (२) मन, (३) वस्त्र, (४) पात्र और (५) स्थान।

[६] छः पदार्थोंसे जीव दुःखी रहता है; वे ये हैं—

[१] मायाकी चाह, [२] नारी, [३] रसीले भोजन, [४] सुन्दर वस्त्र, [५] रूप और [६] प्रभुता।

[७] मनुष्य मनुष्यकी आशा रखता है;—प्रभु कहते हैं—रे दुष्ट! मैं सदा तेरा अङ्गी सङ्गी हूँ और तेरे हालको (दुःख सुखको) जानता हूँ; सब प्रकार समर्थ हूँ; सब पदार्थ तुझको दिया है; गर्भमें रक्षाकी; महासंकटसे छुड़ाया; [उत्पन्न किया]; स्वांस मेरे लिवाये लेता है; भरण-पोषण मैं करता हूँ और तू सेवक औरका बनता है? बड़ा कृतघ्नी है। भजन-करारको यादकर वरना बड़ा दुःख भोगेगा।

[८] असंख्य जीव मोह मायाकी निद्रामें सोये पड़े हैं। कोई विरला पुरुष इस निद्रासे जागा है। जो जागा है उसके हृदयमें परमेश्वरके भजनरूपी खेत जमा है, जिसका फल श्रीराम दर्शन है। इसकी रक्षा भलीभाँति करनी उचित है। जैसे

अनाजके खेतमें पशु, चोर, चिड़िया, शूकर और हरिणके अनाज खाने और उजाड़नेका भय है, वैसे ही भजनरूपी खेतकी भी भोगरूपी पशु, अहंकाररूपी चोर, संकल्परूपी पक्षी, दम्भ-रूपी शूकर, प्रयोजनरूपी हरिणसे रक्षा करना उचित है। जिसने इसकी रक्षा नहीं की उसका खेत उजड़ा भजन-भाव भगा !

[९] ध्यान गुरुका और नाम एवं वेष भगवानका धारण करे।

[१०] पूजाकोटिसमं स्तोत्रम्; स्तोत्रकोटि समो जपः।
जपकोटिसमं ध्यानम्; ध्यान-कोटि-समो लयः ॥

इसलिए नाम जप और अष्टयामकी भावना द्वारा ध्यान करना चाहिए। इससे उन प्रभुके रूपमें अपना रूप लय हो जाता है, वही अमृतत्व सिद्धि है।

[११] ४ ठिकाने रोज जाना चाहिये।—

[१] देव मन्दिर में,—इससे पाप क्षीण होंगे।

[२] सतसंगमें,—इससे विवेक और स्वरूपका ज्ञान होगा।

[३] अस्पताल में,—शरीरसे ममताका त्याग होगा।

[४] श्मशान में,—वैराग्य और कालका भय होगा। इससे शुभ कार्योंमें प्रवृत्ति होती है।

[१२] गर्भके कौलके अनुसार प्रत्येक जीवका मुख्य कर्तव्य है कि श्वांस प्रति १ नाम अवश्य ले।। इसलिए रोजानाके श्वाँसों के २५००० नाम रोज और पिछले ऋणको उतारनेके लिये

२५००० — इस प्रकार ५०००० नाम रोज रटे। विरक्त एक लाख या सवा लाख जितना बन पड़े रटे और रटवावे।

[१३] मैले मनके पाँच चिह्न हैं:—[१] भजनका स्वाद न आना, [२] परमेश्वरके साथ निर्भय रहना, [३] मायाके पदार्थ सत्य जानना, [४] प्रभु चर्चा सुनकर बिसरा देना, [५] संसारी मनुष्योंकी बातोंमें प्रेम रखना (इनको त्याग मनको शुद्ध करे।)

[१४] जीव और परमेश्वरमें पाँच परदे हैं।—

[१] आलस्य, [२] कुटुम्बका मोह, [३] विषयकी प्रीति, [४] अभिमान [५] विश्वकी ममता, प्रभुता। (पांचों परदे दूर हों तो प्रभु मिले।)

[१५] जगत पांच प्रकारका मांस भक्षण करता है।—

[१] पशु पक्षीका, [२] कामादि भोगका, [३] सुन्दर रूप विषय का, [४] निन्दा का और (५) शब्दराग दुर्वचनका; (जिज्ञासुको पाँचोंका त्याग करना चाहिये।)

[१६] जिज्ञासुके ३ लक्षण उत्तम हैं।—

[१] सहनशीलता—भूमिकी नाईं, [२] उदारता—नदीकी नाईं। [३] दयालुता—मेघकी नाईं।

[१७] दश सकार मोक्ष प्रद हैं।—

[१] सत्य, (२) सन्तोष, [३] सेवा, [४] सुमिरन, [५] सुमति, [६] साधु संग, [७] समता, [८] सहन-

शीलता, [९] स्तुति, [१०] सद्गुरु आज्ञा।

१८—पाँच पदार्थ जगत में दुर्लभ है।—

१—सुमति, २—सतगुरु, ३—उपदेशामृत, ४—प्रभु धर्म शिक्षक माता पिता, ५—नीतिमान राजा।

१९-गुरुमुख और मनमुख भोग दोनों भोगते हैं। पर गुरु-मुखमें अमृत और मनमुखमें विष हो जाता है। दोष पात्रका है वस्तुका नहीं। एकही घासको गदहे और हिरण—दोनों खाते हैं। हिरणको कस्तूरी और गदहेको दुर्गन्ध हो जाता है।

२०—जिज्ञासुके दश लक्षण हैं।—

[१] दया, [२] नम्रता, [३] सन्त-स्नेह, [४] उदारता, [५] अदम्भता, [६] असङ्गता, [७] अकामना, [८] विशद वैराग्य, [९] शान्ति, [१०] एकान्त वास करके रोना, प्रभुको रिझाना।

२१—बीजसे वृक्ष तब होता है जब वह अच्छी भूमिमें बोया जाय, जलसे सींचा जाय, बाड़ करे, पशुसे रक्षा करे, धूप लगावे, जल दे, इत्यादि। जब तरु पुष्ट हो जाता है तो हाथीके बाँधनेसे भी कुछ खटका नहीं रहता। इसी प्रकार जीव बीज रूपी है, परमेश्वर रूपी धरती है, सन्तोंकी शिक्षा बाड़ी, माया पशु, वेद वाक्य जल, प्रभु-भय धूप है। यह सब सम्बन्ध हो तब दुःख देनेवाली माया सुख प्रदा हो जाती है।

२२—चार विचित्र पदार्थ हैः—

[१] सदा घटती है—आयु, [२] सदा बढ़ती है—तृष्णा,

[३] कभी घटे कभी बढ़े—संकल्प विकल्प, [४] कभी घटे, न बढ़े—प्रारब्ध कर्म ।

२३—सात उपदेशकी बातें—निम्नलिखित सात प्रकारके मनुष्योंपर अफसोस आता है जो—

[१] मरना सच्चा जानकर भी भूल जाते हैं, [२] माया झूठी जानकर भी उसकी भरोसा करते हैं, [३] प्रारब्धानुसार भोगको गतिको समझकर भी चिन्ताकुल होते हैं, [४] नरकके कष्टोंको जानकर भी पाप कर्म नहीं छोड़ते, [५] प्रभु महिमा और माहात्म्य जानकर भी उसे नहीं भजते, [६] प्रभुको सर्व रक्षक समझकर भी औरोंकी आशा करते हैं, [७] गुरुको सामर्थवान जानकर भी श्रद्धा और विश्वास नहीं करते हैं ।

२४—छः ठिकाने सांसारिक वार्ता न करे—

[१] देव मन्दिरमें, [२] स्मशानमें, [३] मृतक समीप, [४] पिछली रातमें, [५] सन्तोंके समीप, [६] सुमिरनके स्थान में ।

२५—ये आठ चीजें दुर्लभ हैं—

[१] अदब औरतोंमें, [२] वैराग्य जवानीमें, [३] भजन पण्डितोंमें, [४] उदारता धनवानोंमें, [५] प्यार मित्रोंमें, [६] वफादारी सुन्दरियोंमें, [७] इन्साफ बादशाहोंमें, [८] आध्यात्मिक ज्ञान फकीरोंमें ।

२६—मनुष्यमें पाँच मोती हैं जिनके पाँच ही दुश्मन हैं:—

[१] धर्मका शत्रु झूठ, [२] बुद्धिका क्रोध, [३] सन्तोषका

लोभ, [४] विद्याका अभिमान, और [५] उदारताका रिपु पछतावा है।

२७—पाँच वस्तुएँ पाँचको खाती हैं—

[१] चिन्ता उम्रको, [२] कृपणता खुराकको, [३] निद्रा-भजनको, [४] त्याग पापको और [५] उदारता बलायको खाती है।

२८—सन्तको लड़कोंके चार लक्षण ग्राह्य है—

[१] भोजनकी चिन्ता न रखना, [२] आपसमें लड़कर भी शत्रुता न रखना, [३] रोगसमय प्रभुको दोष न देना, [४] साथियोंके दुःख सुखमें साथ न छोड़ना।

२९—प्रतिष्ठा शूकरी विष्ठ है ?

[३०] जप, तप, योग यज्ञ उपवास,
सबते नीक नाम जप तुलसीदास।

❀ ❀ ❀ ❀

तिरहुत चौंसठि कोस महँ नदी ताल बन बाग।
विपुल मनोहर लखत उर उपजत प्रति अनुराग॥
चारि ठाम निज धाम जहँ निवसत जन बड़ भाग।
सीतामढ़ी सु जनकपुर गिरजा बाग तड़ाग॥

राम! त्वत्तोधिकं नाम वर्त्तते नात्र संशयः।
त्वयाहि तारिताऽयोध्या, नाम्नातु भुवनत्रयम्॥

❀ ❀ ❀ ❀

नाम महा निधि मन्त्र, नामहि सेवा पूजा।
जप तप तीरथ नाम, नाम बिनु और न दूजा॥
नाम प्रीति, नाम बैर, नाम कहि नामहि बोले।
नाम अजामिल साख, नाम बन्धन ते खोले॥
नाम बड़ो रघुनाथ ते राम निकट हनुमत कह्यो।
कबीर कृपा ते पद्मनाभ परम तत्त्व परिचय लह्यो॥
(—भक्तमाल)

❀ ❀ ❀ ❀

जयति रसिक वैष्णव सकल, जप सियराम सुनाम।
जयति जयति हनुमान प्रभु, पूरक जन मन काम॥

——❀——

जय सिया राम, जय जय सिया राम।
जय सिया राम, जय जय सिया राम॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम।
जय सिया राम, जय जय सिया राम॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम।
जय सिया राम, जय जय सिया राम॥
जय सिया राम, जय जय सिया राम।
जय सिया राम, जय जय सिया राम॥

——❀——

मुद्रक—रामशरण सिंह यादव, वणिक प्रेस, साक्षीविनायक-काशी।

श्री सत गुरु बिनु द्रवत नहिं, श्री सिय राम न नाम।
श्री सिय राम सुनाम बिनु, लहहिं न जन विश्राम ॥
नाम मंत्र वर वेष मम, रूप सु लीला धाम।
इन समान नहिं धर्म कोउ, साधन-प्रद विश्राम ॥
तिलक छाप कण्ठी युगल, युगल मंत्र निज-नाम।
श्री रसराज उपासना, धारि रटहु सियराम ॥
कैसहु पामर पतित जड़, सब नीचनि में नीच।
रटै नाम सियराम मुख, परै न ते भव कीच ॥
श्री सियराम उपासना१, नाम रटन२, सखि-भाव३।
वैष्णव-वेष४ सुश्रेष्ठ चहुं, सब प्रकार श्रुति गाव ॥
सत-गुरु सन चारिउ सुयें, धारन करहिं सचेत।
आराधहिं दृढ़ नेम करि, पावहिं ते साकेत ॥

पुस्तक मिलने के पते—

(१) संकट मोचन, लंका, बनारस।

(२) सद्गुरु-निवास, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर।

❀ जय सियाराम, जय जय सियाराम ❀ जय सियाराम, जय जय सियाराम ❀